अध्याय तीसरा

प्रेमचन्द की कहानियों में ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्रण

अध्याय तीसरा

प्रेमचन्द की कहानियोंमें ग्रामीण जीवनका यथार्थ चित्रण

भारत यह ग्रामोंसे भरा हुआ कृषिप्रधान देश है। आज भी करिबन अस्सी प्रतिशत लोग ग्रामोंमें ही रहते हैं। यहां का जीवन शहरी जीवन से बिल्कुल अलग तथा वैशिष्टपूर्ण होता है। यहां का अज्ञान, आपसी झगड़े, लोगोंका जनजीवन, उनकी खेती, फसल, शोषणके नियामक जमींदार, पूँजीपति आदि का यथार्थ चित्रण हमें ग्रामोंमें ही मिलता है।

ग्राम किसे कहते है ?

सुसंबध्द तथा सुसंघटित समुदायसे रहनेवाले छोटेसे भूभाग को "ग्राम" कहा जाता है।

ग्राम शब्द का परिचय :

१] " जहाँतक "ग्राम" शब्द की व्युत्पत्ति का सम्बन्ध है, पाणिनी ने ग्राम को एक स्वतंत्र धातु ही स्वीकार किया है जिसका अर्थ होता है "आमंत्रण"। "[१]

१] पाणिनी = अष्ठाध्यायी, अध्याय - ५, प्रकरण - २, पद - १०, पृष्ठ ८९६, संस्करण १९७७ ।

२] " आप्टे ने "ग्राम" की व्युत्पत्ति ग्रस धातु में "मन" प्रत्यय लगाने से मानी है। ग्रस धातु का अर्थ होता है ग्रस्त करना। जो ग्रस्त करने अर्थात अपने में विलीन करने की शक्ति रक्खे उससे ग्राम का बोध होता था। "[१]

३] " ग्रस धातु ग्रहण अर्थमें भी प्रयुक्त होती है। ग्रस धातु से ही ग्रास बना। अर्थात ग्रास की शक्ति रखनेवाला स्थान "ग्राम" कहलाता था। "[२]

४] " अंग्रेजी में ग्राम के लिए "विलेज" अथवा "विला" शब्द का प्रयोग होता है। "विला" मूलत: फ्रेंच शब्द है जिसका अर्थ होता है ग्रामीण निवास स्थान। "[३]

५] " आक्सफोर्ड डिक्सनरी में "विलेज" उस स्थान के लिए प्रयुक्त हुआ है जो "हैमलेट" से बड़ा और नगर से छोटा हो। जिसका शासन नगर की अपेक्षा अधिक सरल हो। छोटी-छोटी इमारतों के समूहको भी "विलेज" की संज्ञा दी गई है। "[४]

६] " इन्साइक्लोपीडिक कोषमें "विलेज" घरों का एक समुह है तथा वह स्थान होता है जो नगर से छोटा और हैमलेट से बड़ा हो। "[५]

१] डॉ. ज्ञान अस्थाना - हिन्दी उपन्यासोमें ग्राम समस्याएँ, पृ. ३२, सं. १९७७॥
२] वही - वही , पृ. ३२, वही।
३] वही - वही , पृ. ३२, वही॥
४] वही - वही , पृ. ३२, वही।
५] इन्साइक्लोपीडिक डिक्शनरी - भाग - ७, [विशेष संस्करण]

७] " अंग्रेजी भाषा के आधारपर "ग्राम" वह भूमि खण्ड हुआ जो "हैमलेट" अर्थात "परवा" से कुछ छोटा हो तथा जहां छोटे-छोटे घर बसे हो। आधुनिक युगमें हिन्दीमें ग्राम का रूप प्रचलित है वह अंग्रेजी "विलेज" के अनुरूप है। "[१]

८] " संस्कृति और प्राकृत ग्राम शब्द का अनेक अर्थोमें प्रयोग मिलता है। उदा. हरपार्थ अमरकोष में घोष, आभरि आदि जातियों के विश्रामस्थल के लिए "ग्राम" शब्द का प्रयोग हुआ है। "[२]

९] " प्राचीन कालमें भी प्राय: ग्राम में निम्न श्रेणीके लोग रहते थे। जो जातिगत पेशा करते थे। ग्राम के समीप की भूमि उपशल्य कहलाती थी। "[३]

१०] "निवासके योग्य स्थान को सन्निवेश और निकर्षण कहते थे। अर्थात जिस भूमि को देखकर चित्त प्रसन्न हो, आकर्षित हो। "[४]

११] " प्राकृतमें "ग्राम" के अर्थ समूह, निकर, प्राणि-समूह, जन्तु निकर मिलते हैं। छोटे गांव के लिए 'ग्रामड' शब्द प्रयुक्त होता था। "[५]

१] डॉ. ज्ञान अस्थाना - हिन्दी उपन्यासोंमें ग्राम समस्याएँ, पृ. ३३, सं. १९७१।

२] वही - वही , पृ. ३३, वही।

३] वही - वही , पृ. ३३, वही।

४] वही - वही , पृ. ३३, वही।

५] वही - वही , पृ. ३३, वही।

आदिमानव जब इस सृष्टिपर अवतरित हुआ तो उसे उदरनिर्वाह के लिए फल, पशु-पक्षियोंकी शिकार करते हुए इधर-उधर भटकना पड़ा। प्रारंभमें वह निबिड़ वन तथा अरण्योंमें अपने परिवारके सीमित व्यक्तियों के साथ रहा होगा॥ धीरे-धीरे वह एक स्थानपर रहने लगा होगा तब उसका परिवार एक विशिष्ट उपजाऊ भूमिपर निर्भर रहता होगा। अनेक ग्रंथोंसे ज्ञात होता है कि, भटकते हुए मनुष्य को एक स्थानपर बसाकर कुल का रूप प्रदान करनेमें कृषि को विशिष्ट रूप से श्रेय प्राप्त हुआ है।

"इस आधारपर अनुमान सहज ही है कि जहां कहीं कोई जत्था या टुकड़ी बस जाती थी वही भूखण्ड ग्राम का रूप धारण कर लेता था। "[१]

" वैदिक कालमें ग्राम " = :
===============

वैदिक कालमें खेती और पशुपालन ये दो ही जीवन-यापन के प्रधान साधन थे। उससमय खेतीकी उन्नतिही सर्वोपरी समझी जाती थी और लोग कृषि विज्ञान अच्छी तरह जानते थे। कृषि की जमीन व्यक्तिगत पारिवारिक सम्पत्ति समझी जाती थी।

इस कालमें कृषक आज के समान विपन्न नहीं था। खेती और पशुपालन के अतिरिक्त गृहउदयोग, शिल्पकला, कपड़े बुननेका कौशल आदि भी वह अच्छी तरह जानता था। इस युगमें व्यापार भी उन्नत था। राजा और जनता का परस्पर सम्बन्ध भी सन्तुलित रूपसे रहता था।

ग्राम का एक मुखिया होता था। गांवमें ग्रामसंघ होता था। उसके अधिकारमें कभी एक या एकसे अधिक गांव रहते थे। गम्भीर अपराधों के मुकदमें और दण्डको छोड़कर बाकी सारे झगड़े और मुकदमोंका फैसला यही ग्रामसंघ करता था। इस दृष्टिसे यह संघ एकप्रकार से न्याय रक्षक होता था। इस संघको

१] डॉ• ज्ञान अस्थाना : हिन्दी उपन्यासोमें ग्राम समस्याएँ, पृष्ठ ३६, सं. १९७१।

जनतासे लगान लेना, उसमें वृध्दि करना, बेगार लेना आदि अधिकार प्राप्त थे। डाकुओंसे और शत्रूओंसे लोगोंकी रक्षा करना इस संघका मुख्य काम था। ग्रामकी आर्थिक अवस्थाके अनुसार यह संघ राजा को कर देता था। यह संघ ग्रामीण जनताके विरुध्द कुछ कर पाता तो उसे "ग्रामद्रोही" ठहराया जाता था।

" रामायण - महाभारत कालमें ग्राम " = :
==========

इस कालमें नदी, टीले, जंगल और पहाड़ी प्रदेश ग्रामोंके आसपास की भूमि की विशेषताएँ समझी जाती थी। कृषि का अर्थ केवल हल चलाना था। इस समय किसानोंके तीन प्रकार थे ---- १] जिनके पास बढ़िया हल हो, २] जिनके पास घिसे हुए हल हो और ३] जिनके पास स्वयं के हल न हो। कृषक के जीवनमें बैल का महत्त्वपूर्ण स्थान था।

प्रत्येक जनपद [बस्ती] का नाम उसमें बसनेवाले ऋषियोंके अनुसार दिये जाते थे। उदा. पंचालों के सन्निवेश का स्थान पंचाल कहलाया। मुख्यत: राजाधीन और गणाधीन दो प्रकारके जनपद थे। प्रत्येक जनपदमें एक सभा और एक परिषद होती थी। इससमय पंचायत की निर्मिती हो गई थी। पंचायतमें एकमुखिया होता था, जिसे सब अधिकार दिये जाते थे वही अधिकार आज के सरपंचों को दिए गये हैं। आज की पंचायतोंका ढाँचा प्राचीन युगपर आधारित है।

" बौध्द कालमें ग्राम " = :
==========

बौध्द कालमें सोला महाजनपद विशेष प्रमुख थे। प्रत्येक राज्य नगर, शहर, कस्बा और जनपदमें विभक्त था। जनपदोंके अंतर्गत अनेक ग्राम थे और

ग्राम का शासक ग्रामयोजक कहलाता था। इसके ऊपर राजा का शासन था। इस कालमें भूमि कृषक की सम्पत्ति समझी जाती थी। कृषि व्यवसाय से अधिक इस युगमें शिल्प और व्यवसायके क्षेत्रमें अधिक उन्नति हुई। इस कालमें २३ व्यवसायोंका उल्लेख मिलता है।
जैसे -: बढ़ई, जुलाहे, पत्थर का काम करनेवाले, चर्मकार, कुम्हार आदि।

"गुप्त कालमें ग्राम " = :
==========

इस कालकी सर्वतोमुखी सांस्कृतिक प्रगति में ग्रामशासन व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण योगदान था। इस कालमें राजा को ईश्वरतुल्य मानने की धारणा लोकप्रिय थी। ग्राम पंचायतों और नगर सभाओं तथा व्यावसायिक श्रेणियोंको शासन सम्बन्धी कार्योंसे सम्बन्धित काफी अधिकार थे, सम्पूर्ण शक्ति सिर्फ राजामें केन्द्रित नहीं थी॥

गांव का मुखिया "ग्रामाध्यक्ष" कहा जाता था। ग्राम सभायें ही ग्राम की सुरक्षा का ध्यान रखती थी, मुकदमों का निर्णय करती थी तथा ग्रामवासियोंके सार्वजनिक हित के कार्य करती थी।

इस कालमें खेतिहर जमीनसे उपज का प्राय: १८ प्रतिशत से १५ प्रतिशत भाग राज्य कर के रूपमें लिया जाता था। उपज अच्छी न होनेपर लगान कम हो जाता था।

" मुगल कालमें ग्राम " = :
==========

इस कालमें ग्रामीण लोग खेती और घरेलू उद्योगधन्धों से अपना निर्वाह करते थे। आर्थिक दृष्टिकोनसे गांव इस समय स्वत:पूर्ण थे। कृषक, मजदूर, लोहार, बढ़ई, बनिया, कुम्हार सब अपना काम एक दूसरेकी सहायतासे करते थे। परंतु

इतनी मेहनत करनेपर भी उन्हें दो वक्त के लिए पेटभर भोजन भी नहीं मिलता।

मुगल सम्राटोंने ग्रामजीवनमें कोई हस्तक्षेप नहीं किया। ग्रामसंघ अपनी परंपरानुसार काम करते रहे। राज्य और कृषक का सम्बन्ध सिर्फ कर देने तथा कर लेने तक था।

मुगल सम्राट अकबर का शासन और शान्ति, धार्मिक और पारिवारिक जीवनमें हिन्दूओंका महत्त्वपूर्ण स्थान था। परंतु औरंगजेब अकबर के विपरित था। उसने "जजिया कर" लगाया और संसास्कृतिक उत्सवोंपर भी प्रतिबन्ध लगा दिया। अपनी सारी शक्ति साम्राज्य विस्तारमें ही लगाई। प्रजा की दशा सुधारने की ओर ध्यान ही नहीं दिया। इसकारण इस कालमें ग्राम-व्यवस्थामें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ।

" अंग्रेजी शासन कालमें ग्राम " = :

==========

अंग्रेज भारतमें केवल शासन करेने के उद्देश्यसे नहीं आये थे। उनका मुख्य उद्देश्य भारतीयोंका शोषण था। इस शोषण के कारण मजदूरी करनेवाला मजदूर भूखा मरने लगा।

उन्होंने भारतमें जमींदारी प्रथा शुरू कर दी। कॉर्नवॉलिसने इस प्रथा की जड़े और भी मजबूत बना दी। उसने खेती नीलाम करने का हुक्म दिया इसे खरीदनेवाले प्राय: पूँजीपति ही थे। इसतरह यहां के रईस जमींदार बन गये और किसानों का भूमिपर से अधिकार समाप्त होने लगा। परिणामत: भारतीय किसानों की आर्थिक स्थिति जमींदारी प्रथा के कारण गिरने लगी, जिसे उठाने का प्रयत्न न ही जमींदारोंने किया और न ही ब्रिटिश सरकारने।

ईस्ट इण्डिया कम्पनीके आने के समयतक ग्राम पंचायतों का प्रभुत्त्व देशपर विद्यमान था। इन पंचायतोंका इतना महत्त्व था और लोगोंका उसपर इतना विश्वास था कि, आज भी ग्रामवासियों में "पंच-परमेश्वर" की कहावत दिखाई देती है।

अंग्रेजोंके पहले जितने भी राज्य और शासक हुए वे सब ग्राम पंचायतों

को अपना सहायक और सहयोगी समझते थे। परंतु अंग्रेजोंकी भारत पर एकछत्री अंमल करनेकी महत्त्वकांक्षा से जान-बूझकर पंचायतों के संगठन और अधिकारोंको छिन्न-भिन्न कर दिया। उनकी न्याय पध्दतिपर प्रहार करके भारतीय ग्रामों और वहां की अधिकांश जनता की सामाजिक और आर्थिक दृढ़ताको शिथिल बनाकर बनाकर भारतसे बाहर जानेवाले सामान पर भारी कर निर्यात कर के रूपमें लगाया।

१८ वी शताब्दी की औद्योगिक क्रांतिने इंग्लंडका आर्थिक ढाँचा ही बदल गया। इससमय ब्रिटन एक औद्योगिक राष्ट्र बन गया और कच्चा सामान की आवश्यकता की पूर्ति वह भारतमें तैयार होनवाला जूट, सन, रूई, रेशम, लोहा, तांबा आदि वस्तुओंद्वारा पूरी करने लगा। अंग्रेजोंने भारतीय कुटिर उद्योगोंका नाश कर ग्रामीण समाजकी जड़े हिला दी और वहां की सभ्यता का नाश कर दिया।

निष्कर्ष =:

वैदिक काल से अंग्रेजी शासनकाल तक के ग्रामोंका इतिहास देखनेपर यह स्पष्ट हो जाता है कि, किसप्रकार उनके राज्यमें ग्रामीण जीवन विश्रृंखल होता गया। एक समय ऐसा था जब ग्रामोके संगठन और शासनकी शक्तिपर भारत देशको "स्वर्णकाल" होनेका गौरव प्राप्त हुआ था। अपनी संस्कृति तथा सभ्यता पर गर्व करनेवाला भारत इन ग्रामोमेंही बसता था। जिस देशके मानव धर्म और आदर्शको प्राप्त करनेका प्रयत्न सम्पूर्ण संसार में हो रहा है वही देश अंग्रेजाके शासन कालमें अपनी अधोगति को प्राप्त हुआ। यंहा की सभ्यता और संस्कृति के नामपर केवल खंडहर रह गये।

हमारे देश और यहांकी सभ्यता, संस्कृति की पहचान हमारे गांव ही है। भारत को इस दयनीय स्थितितक पहुँचानेके लिए ही अंग्रेज सरकारने अनेक कानून बनाये थे। भारत का यह पतन देखकर प्रेमचन्द की आत्मा कचोट उठी और यही तड़फन हमें उनकी कहानियोंमें दिखाई देती है।

ग्रामीण जीवनमें शोषणके विविध रूप

प्रेमचन्द युगमें निम्नवर्गीय भारतीय ग्रामीण समाजको एक ओर जमींदार, सामंतवादी वर्ग खोखला बना रहा था, तो दूसरी ओर महाजनी सभ्यता जो ऊँची सूद से गरीब कृषक मजदूर वर्ग को निष्प्राण कर रही थी। इसप्रकार प्रेमचन्द युगका ग्रामीण समाज ब्रिटिश साम्राज्यवाद और सामंतवादी वर्ग की पराधीनता का शिकार बन चुका था।

अमृतराय लिखित " प्रेमचन्द : कलम का सिपाही " इस ग्रंथमें प्रेमचन्द अंतिम बीमारीके समय प्रख्यात कथा साहित्यकार जैनेंद्रकुमार से कहते भी हैं, ---

" महाजनी सभ्यता के पास ईर्ष्या, जोर-जबरदस्ती, बेईमानी, झूठ, मिथ्या अभियोग, आरोप, वेश्यावृत्ति, व्याभिचार, चोरी-डाके आदि का कोई इलाज नहीं है। ये सारी बुराईयाँ दौलत की देन हैं, पैसे के प्रसाद हैं, महाजनी सभ्यताने इनकी सृष्टि की है। वह इनको पालती है और वही यह भी चाहती है कि जो दलित पीड़ित और विजित हैं, वे इसे ईश्वरीय विधान समझकर अपनी स्थिति पर सन्तुष्ट रहें। "[१]

भारतमें जमींदारों की सृष्टि अंग्रेजोंने ही अपने शासनको स्थायी बनाने के उद्देश्यसे की थी। ये जमींदार ग्रामीण लोगोंपर शोषण के विविध पहलूओंद्वारा शोषण करते थे। प्रेमचन्दकी निम्नलिखित कहानियोंमें जमींदार तथा उनके चपरासी, कारिन्दें तथा ब्रिटिश सरकारके हस्तकोंके शोषणका यथार्थ चित्रण मिलता है।

xxxxxx------ २

१] अमृतराय - प्रेमचन्द : कलम का सिपाही, पृष्ठ ६४४, प्रथम सं. १९६२ ।

१] "माताजी का भोग" = :

इस कहानी का नायक "रामधन" एक गरीब किसान था। उसके पास जो जमीन थी उसका उपभोग उसे नहीं मिलता था, क्योंकि चैत के महिने में उसकी सारी उपज खलिहान से उठ जाती थी। आधी महाजन लेता था और आधी जमींदार कें प्यादे। जिसके कारण उसके हाथ कुछ भी नहीं आता था।

एक दिन की बात है उसकी स्त्री बाहर बर्तन माँजते समय सोच रही थी कि, आज घरमें भोजन क्या बनेगा ?. आगे क्या होगा ? घरके लोग क्या खायेंगे और बैलों को क्या खिलायेंगे ? क्योंकि घरमें अनाज का एक दाना भी न था जिसके कारण वह चिंता में डूबी हुई थी। इतनेमें उसके व्दार पर एक साधु आ जाता है। तब रामधन देवताओंके लिए बचाकर रखा हुआ आटा उसे देता है। साधु उस दिन उसके घर ही ठहरता है और रामधन के घरमें जो दाल-रोटी थी वही खाकर सो जाता है।उस दिन रामधन के घर चूल्हा नहीं जलता।

निष्कर्ष =:

इस कहानीमें कहानीकारने जमींदार और महाजन तथा उनके प्यादे किसप्रकार किसानों को लूटते रहते हैं, जिसके कारण दिन-रात मेहनत करनेपर भी अनाज उपजानेवाले किसान को भूखा ही रहना पड़ता है, इसका चित्रण प्रस्तुत कहानी का नायक "रामधन" के व्दारा प्रस्तुत किया है।

२] "लोकमत का सम्मान "= :

इस कहानी का नायक "बेचू" गांवका धोबी होते हुए भी गांव के किसान और स्त्रियाँ उसका सम्मान करती हैं। रुखी-सूखी रोटी खाकर भी वह संतोषका अनुभव करता है। उसके गांवके जमींदार, उनके नौकर, चपरासी और कारिन्दे उससे मुफ्तमें कपड़े धुलवाते थे। कभी-कभी किसी कारणवश बिना इस्तरी

किये कपड़े जब वह इन लोगों को देता है तो ये लोग कभी गालियाँ देते थे, तो कभी मारपीट करते रहते।

जेठ का महिना था। गांव का तालाब सूख गया था अत: बेचू कारिन्दे के कपड़े एक हप्तेमें नहीं दे सका। कपड़े वक्त पर न मिलने के कारण कारिन्दा उसका सत्कार जूतों तथा डण्डों से करते हुए कहता है, -----

" पानी तेरे पास नहीं है और सारी दुनियामें है। अब तेरा इलाज इसके सिवाय और कुछ नहीं है कि गांव से निकाल दूँ। शैतान, दाई से पेट छिपाने चला है, कपड़े दूसरों को बारात करने के लिए देता है, उस पर बहाने बताता है, पानी नहीं, इस्तरी नहीं। "[१]

इसप्रकार कारिन्दा उसपर झूठा इल्जाम लगाता है। बेचू उसे न्याय तथा दया की भीख माँगता है परंतु इसके बदले उसे आठ दिन तक हल्दी और गुड़ पीना पड़ता है। अंतमें कारिन्दे के अन्याय से तंग आकर वह गांव छोड़कर शहर चला जाता है।

शहर आने के बाद कुछ ही दिनोंमें वहांके धोबियोंकी कुनीति का व्यवहार उसे मालूम हो जाता है और वह भी अन्य धोबियोंकी तरह लोगों को कपड़े किरायेपर देने लगता है। इसतरह कई दिन बीत जाते हैं। एक दिन पड़ोस में रहनेवाले मुंशी को एक बारातमें जानेके लिए बेचू अपने एक ग्राहक के कपड़े देता है। संयोगवश उसी बारातमें बेचूका ग्राहक मुंशीजीने पहने हुए कपड़े पहचान लेता है। परंतु बेचूपर उसका विश्वास होनेके कारण वह उसे दगाबाज नहीं समझता। फिर भी रही सही बात जानने के लिए वह मुंशी से पूछता है तो मुंशी उसे कहता है ,-----

" बेचू की निस्बत तुम्हारा जो खयाल है, वह बिल्कुल ठीक है। वह ऐसा ही बेगरज आदमी है, लेकिन भाई पड़ोस का भी तो कुछ हक होता है। मेरे पड़ोस में रहता है, आठों पहर का साथ है। इधर से भी कुछ न कुछ सलूक होता ही रहता है। मेरी जरूरत देखी, पसीज गया। बस और कोई बात नहीं।"[२]

१] प्रेमचन्द - लोकमत का सम्मान, पृष्ठ २८३, संस्करण १९७९ ।

२] वहीं - वही , पृष्ठ २८८, वही ।

ग्राहक का अपने बारेमें विश्वास देखकर बेचूका मन परिवर्तित हो जाता है और वह फिर ग्राहक के कपड़े किराये पर देना बंद कर देता है।

निष्कर्ष = :

इस कहानीमें कहानीकारने ग्रामीण समाजमें महाजनी शोषण के यथार्थ रूप को "बेचू" के माध्यम से चित्रित किया है। कारिन्दोंके अन्याय के कारण किसतरह लोगों को अपना गांव छोड़कर पेट के लिए शहर जाना पड़ता था और वहां जाने के बाद वहां के लोगों के चंगुलमें ये गरीब लोग किसतरह फँस जाते थे और जब उन्हें अपनी गलती मालूम हो जाती थी तब उनमें किसतरह परिवर्तन होता था इसका चित्र प्रस्तुत करनेका प्रयास किया गया है।

३] " विध्वंस " = :

सन् १९१५ में लिखित "विध्वंस" कहानी की नायिका "भुनगी" गौड़ीन, जो संतानहीन विधवा थी, जिला बनारस के "तीरा" नामक गांवमें रहती थी। उसके पास न जमीन थी, न रहने के लिए जगह। अपना उदरनिर्वाह वह भट्टी चलाकर किया करती थी।

हररोज प्रातःकाल उठकर चारों ओर से भट्टी में झोंकने के लिए सूखी पत्तियाँ बटोरकर लाती थी और दोपहर को भट्टी जलाकर अनाज भूनने का काम किया करती थी। एकादशी या पूर्णमासी के दिन उसे गांव के जमींदार पंडित उदयभानु पांडे के दाने भूनने पड़ते थे, जिसके कारण उस दिन उसे साँस लेने के लिए भी फुर्सत नहीं मिलती थी। जमींदार उससे बेगारमें दाने ही न भुनवाते थे, बल्कि उससे घरमें पानी भरने का काम भी करवा लेते थे।

चैत के महिनेमें एक दिन उसके पास जमींदार के यहां से दो चपरासी अनाज के दो बड़े-बड़े टोकरे भुनने के लिए ले आते हैं और तुरंत भून देने के लिए हुक्म देते हैं। उन दो टोकरो को देखकर भुनगी सहम जाती है, क्योंकि सूर्यास्त के पहले उतना अनाज भूनना उसके लिए असंभव था। जमींदार का चपरासी उसे

---- तीसरे पहर तक अनाज भुनने का काम न हुआ तो उसका परिणाम अच्छा न होगा कहकर चला जाता है।

डर से भुनगी जमींदार के अनाज भुनने शुरू कर देती है, परंतु तीसरे पहर तक अनाज भूनकर नहीं हो पाते यह देखकर चपरासी उसे फिर धमकाकर चला जाता है और उसी रात उसकी भट्टी खोद डाली जाती है।

भट्टी खोद डालने से उसके पास रोटी का कोई सहारा नहीं रहता। दूसरे लोगों को भी भूने हुए अनाज नहीं मिलते। अत: गांववाले जमींदार से भुनगी को फिर से भट्टी तैयार करने की आज्ञा लेने के लिए जाते हैं, परंतु जमींदार कोई ध्यान नहीं देता।

भुनगी को कुछ लोग वह गांव छोड़कर दूसरे गांव में जा बसने के लिए कहते हैं, परंतु जिस गांवमें उसने अपने जीवन के पचास साल काटे थे, उस गांवको छोड़कर कहीं और चले जाना वह नहीं चाहती।

इसप्रकार एक महिना गुजर जाता है और भुनगी अपनी भट्टी फिर से बनाना शुरू कर देती है इतनेमें वहां जमींदार आते हैं और उसे भट्टी बनाते देख संतप्त हो जाते हैं और पूछते हैं, ----

" किसके हुक्म से बना रही है ? " [१]

तब वह कहती है, गांववालों के मतानुसार। यह सुनकर जमींदार उस भट्टी को ठोकर मार देते हैं और उसे फिर भट्टी बनाने के लिए मना कर देते हैं। तो भुनगी उन्हें पूछती है कि, भट्टी न बनाऊँगी तो खाऊँगी क्या ? तो जमींदार उसे कहते हैं कि अगर गांवमें रहना है तो चाकरी करनी ही पड़ेगी, नहीं तो गांव छोड़ना पेड़ेगा। तो भुनगी उन्हें कहती है, -------

" क्यों छोड़कर निकल जाऊँ ? बारह साल खेत जोतनेसे असामी काश्तकार [किसान] हो जाता है। मैं तो इस झोंपडेमें बूढ़ी हो गयी। मेरे सास-ससूर और उनके बाप-दादे इसी झोंपडें में रहे। अब इसे यमराज को छोड़कर और कोई मुझसे नहीं ले सकता। " [२]

१] प्रेमचन्द - विश्वंस, पृष्ठ १५७, संस्करण १९८७।

२] वही - वही १५८, वही ।

भूनगी के मुँहसे कानूनी बातें सुनकर जमींदार उसे कहते हैं, -----

" अच्छा तो अब कानून बघारने लगी। हाथ-पैर पड़ती तो चाहे मैं रहने भी देता, लेकिन अब तुझे निकाल कर तभी दम लूँगा। "[१]

और चपरासीयों को पत्तियोंके ढेरमें आग लगाने के लिए हुक्म देते हैं। एक ही क्षण में ज्वालाएँ उठने लगती हैं। सारा गाँव जमा हो जाता है और भूनगी अपने झाड़ के पास निराश भावसे खड़ी देखती रहती है। एकायक वह उस आगमें कूद पड़ती है परंतु किसी को उसे बचाने की हिम्मत नहीं होती और इसतरह भूनगी का अंत हो जाता है। भूनगी के भट्टी के साथ लगी हुई किसानों की कई झोपड़ीयाँ भी जल जाती हैं। लोग आग बुझाने के लिए आगे बढ़ते हैं परंतु ज्वालाएँ अधिक तेजी से भड़क उठती हैं, जिसमें जमींदार के भवन को भी समेट लेती है और देखते-देखते जमींदार का भवन भी भूनगी के भट्टी के साथ नष्ट हो जाता है।

निष्कर्ष = :
======

इसमें जमींदार द्वारा विधवा भूनगीपर किये गये अत्याचारों का यथार्थ चित्रण कहानीकारने प्रस्तुत किया है।

४] " बेटी का धन " = :
==========

सन् १९१५ में लिखित " बेटी का धन " इस कहानी का नायक वयोवृध्द सुक्खू चौधरी एक गरीब किसान और केवट था। वह जिस गांवमें रहता था वह गांव "बेतवा" नदी के किनारे बसा हुआ था और भग्न पुरातन चिन्होंके लिए बहुतही प्रसिध्द था। जिसे देखनेके लिए अनेक स्थानों से लोग आया करते थे। सुक्खू इन लोगों को सारे गांव की सैर कराके वहां की भग्न अवस्थामें स्थित रानी का महल, राजा का दरबार और कुँवर के बैठक के मिटे हुए चिन्हों को दिखाता था।

१] प्रेमचन्द - विध्वंस, पृष्ठ १५८, संस्करण १९८७।

उसके परिवार में तीन लड़के, तीन बहुएँ और पौत्र-पौत्रियाँ थी। उसे गंगाजली नामकी सबसे छोटी बेटी थी, जिसका अभीतक गौना नहीं हुआ था। पत्नीकी मृत्युके बाद बकरी का दूध पिला-पिलाकर उसे बड़ा किया था। उसके परिवारमें खानेवाले लोग तो बहुत थे परंतु खेती सिर्फ एक हल की ही होती थी जिसके कारण परिवारका उदरनिर्वाह जैसे-तैसे हो जाता था। पुरातत्वज्ञान के कारण उसे देखकर उस गांवके झगडू साहू उसपर जलते थे और अपने धनके बलपर उसपर प्रभुत्व जमानेकी ताक में रहते थे। तो जमींदार ठाकुर जीतनसिंह गांववालों से बेगार वसूल करनेका काम करते थे, जिसके कारण सभी गांववाले त्रस्त थे।

एक दिन उसके गांव को देखनेके लिए मॅजिस्ट्रेट आ जाते हैं तब सुक्खू उन्हें जीतनसिंह की शिकायत करता है। तब मॅजिस्ट्रेट जीतनसिंह से पूछते हैं। उसके पहलेही झगडू साहु सुक्खूके विरुध्द सुक्खूने मॅजिस्ट्रेट साहबको बतायी बात की खबर जमींदार जीतनसिंह को देता है, जिसे सुनकर जमींदार सुक्खूके उपर संतप्त हो जाते हैं और अपने कारिन्दोसे बकाया लगान की बही मँगाते हैं। संयोगवश सुक्खूके नाम उस साल का कुछ लगान बाकी निकलता है। सालमें पैदावार की कमी, बेटी गंगाजली का ब्याह तथा छोटी बहूके लिए नथ बनवाने के कारण उसके सब पैसे खर्च हो जाते हैं, जिसके कारण वह लगान अदा नहीं कर सका था। अत: जीतनसिंह उसपर लगान की नालिश ठोक देते हैं। यह देखकर सुक्खू का अभिमान टूट जाता है। दूसरेही दिन उसपर पेशी की तारीख पड़ जाती है, जिसमेंसे मुक्त होने का कोई अवसर उसे नहीं मिलता। मुकदमें का फैसला जीतनसिंह की तरफ हो जाता है और सुक्खू को कुर्कीका नोटिस मिलता है, जिसे देखकर वह निराश हो जाता है और घर से बाहर निकलना बंद कर देता है। घरमें बैठकर अपने कुलदेव का गुण गाया करता रहता है फिर भी उसे शांति नहीं मिलती। वैसे तो उसके घरमें बहुओंके पास काफी गहने थे। परंतु वह उन्हें लेना नहीं चाहता था। उसके बेटे भी कुछ मदद नहीं करते। इसीमें तीन दिन बीत जाते हैं। इन तीन दिनों में उसे सहायता करनेके लिए कोई नहीं आता। उसके अपने बेटे भी उससे मुँह मोड़ लेते हैं। परंतु उसकी बेटी अपने गहने लेकर झगडू साहु के पास गिरवी रखनेका उपाय बताती है। तब ब्याही हुई बेटी का धन पराया समझकर वह बेटी के गहने गिरवी रखनेके लिए तैयार नहीं होता। तब उसकी बेटी आत्महत्या करने की धमकी देती हुई कहती है, ------

" मेरी बात नहीं मानोगे तो तुम्हारे ऊपर मेरी हत्या पड़ेगी। मैं आज ही इस बेतवा नदी में कूद पड़ूँगी। तुमसे चाहे घर में आग लगते देखा जाय, पर मुझसे तो न देखा जायगा। "१

बेटी की बातोंको सुनकर वह उसके किसी भावजके गहने माँग लानेको कहता है। तो गंगाजली उसे कहती है, ----

" भावजों से कौन अपना मुँह नोचाने जायेगा। उनको फिकर होती तो क्या मुँह में दही जमा था, तो कहती नहीं। "२

यह कहकर वह अपने गहनोंकी पिटारी लाती है और उसमें से गहने निकालकर उसके अँगोछे में बाँध देती है। रातके समय सुक्खू गठरी लेकर चुपके से झगडू साहु के पास चला जाता है। उसे देखतेही साहु उसे मुकदमें के बारेमें पूछते हैं। तब वह अपने आनेका कारण बताता है। यह सुनकर साहु अचरज से कहते हैं, ----

" तुमका रूपयोंकी चिंता! घर में भरा है, वह किस दिन काम आयेगा। "३

क्योंकि उन्हें ही नहीं बल्कि सारे गांवको यह विश्वास था कि, सुक्खू के घर लक्ष्मी अखंड निवास करती है। तब सुक्खू उन्हें तीन दिनसे घरमें चूल्हा न जलनेकी बात बताते हुए कहता है, -----

" अब तो तुम्हारे बसाये बसूँगा। ठाकुर साहबने तो उजाड़ने में कोई कसर न छोड़ी। " ४

इन बातोंको सुनकर साहु सुक्खूको निराश नहीं करना चाहते थे क्योंकि, उस पर मुफ्त का एहसान लादनेमें उन्हें कोई कठिनाई नहीं थी। परंतु दूसरी तरफ वह जमींदार जीतनसिंह को भी खुष रखना चाहते थे। अत: वह उसे पूछते हैं कि, तुम्हारे बेटोंने और बहुओंने मदद क्यों नहीं की। तब सुक्खू कहता है, -----

---

१] प्रेमचन्द - बेटी का धन , पृष्ठ ३० । संस्करण १९८७।

२] वही - वही पृष्ठ ३०। वही ।

३] वही - वही पृष्ठ ३१। वही ।

४] वही - वही पृष्ठ ३१, वही ।

" भाई, लड़के किसी काम के होते तो यह दिन क्यों देखना पड़ता। उन्हें तो अपने भोग-विलास से मतलब। घर गृहस्थी का बोझ तो मेरे सिर पर है। मैं इसे जैसे चाहूँ, सँभालू। उनसे कुछ सरोकार नहीं, मरते दम भी गला नहीं छूटता। मरूँगा तो सब खाल में भूसा भरा कर छोड़ेंगे। "१

पूछते हैं कि
तब साहु इस कर्जके बदले गिरवी रखनेके लिए क्या लाए हो ?
तब वह गहनोंकी पोटली उनके सामने रखता है। उसे देखकर साहु अचरजमें आकर पूछते हैं, कि यह गहने किसके हैं ? तो साहु को सुक्खू बेटी गंगाजली का नाम बता देता है। यह सुनकर साहु स्तंभित हो जाते हैं, क्योंकि उनके धर्मशास्त्र में कन्या के गाँव के कुएँ का पानी पीने से प्यासों मर जाना अच्छा समझते थे। अत: सुक्खूकी बेटी के गहने देखकर साहु पिघल जाते हैं और सुक्खूको कहते हैं, ----

" वही परमात्मा जिसने अब तक तुम्हारी टेक निबाही है, अब भी निबाहेंगे। लड़की के गहने लड़की को दे दो। लड़की जैसी तुम्हारी है वैसी मेरी भी है। यह लो रुपये। आज काम चलाओ। जब हाथमें रुपए आ जाएँ दे देना। "२

इन बातों को सुनकर सुक्खू के मनपर असर पड़ता है और वह जोर-जोर से रोने लगता है। उसके सामने भगवान की मूर्ति आती है और वह झगडू साहु जो सारे गाँव में बदनाम था, जिसके बारेमें खुद उसने हाकिमों से शिकायत की थी, साक्षात उसे देवता समान लगते हैं और वह गद्गद कंठ से कहता है, ----

" झगडू, तुमने इस समय मेरी बात, मेरी लाज, मेरा धर्म कहाँतक कहूँ मेरा सब कुछ रख लिया। मेरी डूबती नाव पार लगा दी। कृष्ण मुरारी तुम्हारे उपकार का फल देंगे और मैं तो तुम्हारा गुण जबतक जीऊँगा, गाता रहूँगा। "३

निष्कर्ष = :
=====

इसमें जमींदार जीतनसिंह सुक्खू का शोषण किसतरह करता है इसका यथार्थ चित्रण कहानीकारने प्रस्तुत किया है।

१] प्रेमचन्द - बेटी का धन , पृष्ठ ३१-३२ , सं. १९८७ ।

२] वही - वही , पृष्ठ ३२, वही ।

३] वही - वही , पृष्ठ ३३ , वही ।

५] " पूस की रात " = :

इस कहानी का नायक " हल्कू " एक गरीब किसान है। माघ और पूस की जाड़ों की रातोंमें उसे हर दिन खेत की रखवाली करनेके लिए जाना पड़ता है। इसलिए वह गर्मीके दिनोंमें ही अपनी मजूरीसे अपना पेट काटकर एक-एक पैसा कम्बल खरीदनेके हेतू बचाता है जिस दिन वह तीन रूपये इकठ्ठे करता है उसी दिन सहना महाजन हल्कूको उधार दिए हुए पैसे माँगने आता है। सहनाको देखकर हल्कू एक क्षणके लिए अनिश्चित दशामें खड़ा हो जाता है। वह सोचता है, बिना कम्बल लिए पूस की रात काटी नहीं जा सकती और सहनाको रूपये दिए बिना टाला भी नहीं जा सकता। क्योंकि सहना उधार दिए हुए पैसे लेकरही वापस लौटेगा इस बातका हल्कूको विश्वास था इसलिए वह अपनी पत्नीसे तीन रूपये लेकर सहना को देनेके लिए बाहर आता है। इसका वर्णन कहानीकारने निम्नप्रकार से किया है, ----

" हल्कू ने रूपये लिए और इस तरह बाहर चला मानो अपना हृदय निकालकर देने जा रहा हो। उसने मजूरीसे एक-एक पैसा काट-काटकर तीन रूपये कम्बलके लिए जमा किये थे। वह आज निकले जा रहे थे। एक-एक पगके साथ उसका मस्तक अपनी दीनताके भारसे दबा जा रहा था। " १

सहना महाजन कम्बलके लिए रखे हुए तीन रूपये लेकर लौट जाता है और पूसकी ठंडी रातमें हल्कू पुरानी चादर लेकर खुले मैदानमें खेत की रखवाली करने चला जाता है। ठंडीसे बचनेके लिए वह पत्तियाँ जमा कर आग जलाता है और गर्मी पानेके लिए जबरा कुत्तेको अपनी गोदमें लेकर सो जाता है। उधर खेतमें नील गाये खेत चौपट कर देती है। जब उसकी पत्नी सुबह आकर उसे खेतका हाल सुनाती है तो उसे दुःख के बदले सुख ही होता है, क्योंकि अब उसे पूस की ठंडी रातमें खुले मैदानमें सोने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

निष्कर्ष = :

कहानीकारने हल्कूके माध्यमसे संपूर्ण कृषक वर्गका यथार्थ चित्रण प्रस्तुत

१] प्रेमचन्द - पूस की रात, पृष्ठ १५७, संस्करण १९८८।

करनेका प्रयास किया है। ग्राममें रहनेवाले लोग सुबहसे लेकर श्यामतक काम करनेके बाद भी वे अपनी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेमें असमर्थ रहते हैं। दिनभर परिश्रम तो करते रहते हैं लेकिन उनके परिश्रम का फल महाजन तथा साहुकार लोग उठाते हैं और वे बेचारे अंततक गरीब ही रह जाते हैं।

६] " बलिदान " = :

==========

सन् १९१८ में लिखित "बलिदान" कहानी का नायक "हरखचन्द्र कुरमी" समय के फेरे में "हरखू" बन जाता है। बीस साल पहले उसका शक्कर का कारखाना था, अब उसके पास केवल पाँच बीघा जमीन और दो बैल रह जाते हैं।

उसकी स्थितिमें परिवर्तन होनेपर भी उसको गांवमें सम्मानकी दृष्टिसे देखा जाता है। पंचायतोंमें, आपस की कलहमें उसकी सम्मति ली जाती है।

उसने अपने जीवनमें कभी दवा दारू नहीं ली थी। वह बीमार तो जरूर पड़ता लेकिन दस-पाँच दिनमें बिना दवा खाये अच्छा हो जाता था। परंतु उस वर्ष भी वह कार्तिकमें बीमार पड़ता है और बिना दवा खाये अच्छा हो जाऊँगा ऐसा सोचकर वह कोई दवा नहीं लेता। जब वह एक महिने तक चारपाई से उठ ही नहीं पाता तब उसे दवा-दारू की जरूरत मालूम होती है उसका लड़का "गिरधारी" हर-तरहकी जड़ी-बूटियोंकी दवा उसे पिलाता है परंतु कोई फायदा नहीं होता और पाँच महिने बाद होली के दिन वह मर जाता है। उसका बेटा गिरधारी अपने पिता का क्रिया-कर्म बड़े धूमधाम से करता है। होली के दिन हरखू की मृत्यु हो जानेके कारण गांवमें होली का त्योहार मनाया नहीं जाता।

हरखू की मृत्यु के बाद उसकी पाँच बीघे जमीन जिसमें तीन-तीन फसलें होती थी गांववालों के नजर पर चढ़ जाती है। इधर गिरधारी अपने पिता के क्रिया-कर्म में व्यस्त होता है और उधर गांववाले गांव के जमींदार लाला ओंकारनाथ को हरखू की जमीन लेने के लिए नजराने की बड़ी-बड़ी रकमें पेश करने लगते हैं, तो कोई नजराने की दूनी रकम, कोई सालभर का लगान पेशगी देनेपर तैयार होता है। परंतु लाला ओंकारनाथ गांववालों से ज्यादा गिरधारी का हक खेतीपर समझते थे और वह अगर दूसरोंसे भी कम नजराना दे तो खेत उसीको देना चाहते थे। वे चैत के महिनेमें

उसे बुलाते हैं और खेतीके बारेमें पूछते हैं तो गिरधारी उन्हें कहता है, ---

" उन्हीं खेतों का आसरा है। जोतूँगा नहीं तो क्या करूँ। " [१]

तो जमींदार उसे कहते हैं, ---

" नहीं, जरूर जोतो, खेत तुम्हारे हैं। मैं तुमसे छोड़ने को नहीं कहता हूँ। हरखू ने उन्हें बीस साल तक जोता। उनपर तुम्हारा हक है। लेकिन तुम देखो ही अब जमीन की दर कितनी बढ़ गयी है। तुम आठ रुपए बीघे पर जोतते थे, मुझे दस रुपए मिल रहे हैं और नजराने के रुपये सो अलग। तुम्हारे साथ रिआयत करके लगान वही रखता हूँ, पर नजराने के रुपए तुम्हें देने पड़ेंगे। "[२]

उस वक्त गिरधर उन्हें घर की स्थितिका हाल सुनाता है और रुपये न होने की बात करता है। लेकिन जमींदार उसे जरा-सी भी छूट न देते हुए कहते हैं, ---

" नजराने में एक पैसे की भी रिआयत न होगी। अगर एक हफ्ते के अन्दर रुपए दाखिल करोगे तो खेत जोतने पाओगे, नहीं तो नहीं, मैं कोई दूसरा प्रबन्ध कर दूँगा। "[३]

गिरधारी उनकी बातों को सुनकर निराश होकर घर लौटता है, क्योंकि १०० रुपयोंका प्रबन्ध करना उसके लिए कठीन था। उसकी पत्नी, सुभागी, और वह सोचते हैं पर कोई उपाय नहीं सूझता। खेतोंका हाथ से निकलने का ध्यान आते ही उसके हृदय में हूक-सी उठने लगती है और वह घबड़ाकर घरसे निकल जाता और घंटो उन्हीं खेतों के मेड़ोंपर बैठा रोता रहता।

इसतरह एक हफ्ता चला जाता है और वह रुपयोंका कोई प्रबन्ध नहीं कर सकता। आठवें दिन उसे पता चलता है कि, गांव के मुखिया कालिकादिन ने १०० रू. नजराना देकर १० रुपये बीघेपर उसका खेत ले लिया है। यह देखकर वह अपने दादा का नाम लेकर बिलख-बिलख कर रोने लगता है। उस दिन उसके घर चूल्हा भी नहीं जलता।

१] प्रेमचन्द - बलिदान, पृष्ठ ५८, संस्करण १९८७।

२] वही - वही, पृष्ठ ५८, वही।

३] वही - वही, पृष्ठ ५९, वही।

गिरधारी की तरह उसकी पत्नी चुपचाप बैठनेवाली स्त्री नहीं थी। वह क्रोधसे भरी कालिकादिन के घर जाती है और उसकी पत्नी के साथ खूब लड़ती है। साथही पंचायतमें जाकर अपना दुखड़ा रोती है। इधर गिरधारी इतने दिनोंतक गांवमें सम्मानका सुख भोगनेके बाद अब दूसरोंकी मजदूरी करने के बदले घर जाना अच्छा समझता है।

इसप्रकार तीन महिने बीत जाते हैं और आषाढ़ का महिना आता है। किसान अपने हल और जुए ठीक करने लगते हैं। गिरधारी भी पागलपनमें अपना बिगड़ा हुआ हल लेकर "रज्जू" बढ़ई के पास चला जाता है और बिगड़े हुए हल को ठीक करने के लिए कहता है। परंतु रज्जू उसकी तरफ करूण भावसे देखकर अपना काम करने लगता है और गिरधर होशमें आकर चुपचाप घर चला आता है।

गांवमें चारो ओर मची हुई हलचल और खेती के बारेमें चर्चा सुनकर गिरधारी मछलीकी तरह तड़पता रहता है। एक दिन संध्या समय वह अपने बैलोंको खुजला रहा था, इतनेमें मंगलसिंह आकर उसे बैलों को बेचने की सलाह देता है। और ८० रूपयोंकी जोड़ी ६० रूपयोंमें ठीक कर लेता है। उस रात गिरधारी बिना कुछ खाए चारपाई पर पड़ा रहता है। सुबह जब सुभागी चिलम भरकर ले जाती है तो वह चारपाई पर नहीं होता। कहीं गया होगा ऐसा समझकर वह दो-तीन घड़ी उसकी राह देखती है, परंतु वह वापस नहीं लौटता। चारों ओर खोजने पर भी उसका कहीं पता नहीं चलता।

उसी रात सुभागी को गिरधारी अपने बैलोंके पास खड़ा दिखाई देता है। जब वह उसके तरफ चली जाती है तो वह गायब हो जाता है और सुभागी चिल्लाकर बेहोश हो जाती है।

दूसरे दिन कालिकादिन अंधेरेमेंही हल लेकर गिरधारी के खेतपर चला जाता है। एकायक उसे खेतोंके मेड़पर गिरधारी खड़ा दिखाई देता है, तो कालिकादिन उसे पूछनेके लिए उसकी ओर चला जाता है। तब वह हटकर पीछेवाली कुएँ में कूद पड़ता है। यह देख कालिकादिन हल और बैल वही छोड़कर चिल्लाता हुआ गांव की तरफ भागने लगता है। सारे गांवमें शोर मच जाता है और लोग

नाना प्रकारकी कल्पनाएँ करने लगते हैं। तभी से हरखू के खेतमें जाने की हिम्मत न कार्तिकादिन को होती है और न और किसीकी, क्योंकि उनकी यह धारणा बन बैठी थी कि, गिरधारी अपने खेतोंके चारो तरफ मँडराता रहता है।

निष्कर्ष = :

इसमें कहानीकारने गिरधारी के माध्यमसे यह दिखाने का प्रयास किया है कि, किसान लोग अपनी खेती बनाये रखने के लिए जीतेजी और मरनेके बाद भी किसतरह बलिदान देते हैं, इसका चित्रण प्रस्तुत किया है।

७] " सवा सेर गेहूँ " = :

इस कहानीका नायक शंकर एक गरीब किसान है। वह इतना गरीब है कि दो वक्त की रोटी भी उसे नसीब नहीं होती। एक दिन संध्यासमय एक महात्मा उसके घर आते हैं। अतिथि को भोजन के लिए उसके घरमें जौ के आटे के सिवा कुछ न होनेके कारण वह पंडित विप्रजीके घर जाकर "सवा सेर गेहूँ" उधार ले आता है और अतिथिको भोजन बनाकर खिलाता है। उधार लाये हुए "सवा सेर गेहूँ" लौटानेके बारेमें वह अपने मन ही मन सोचता है, ----

" सवा सेर गेहूँ इन्हें क्या लौटाऊँ, पसेरी बदले कुछ ज्यादा खलिहानी दे दूँगा, यह भी समझ जायँगे, मैं भी समझ जाऊँगा। चैत में जब विप्रजी पहुँचे तो उन्हें डेढ़ पसेरीके लगभग गेहूँ दे दिया और अपने को उऋण समझकर उसकी कोई चर्चा न की। विप्रजीने फिर कभी न माँगा। सरल शंकर को क्या मालूम था कि यह सवा सेर गेहूँ चुकाने के लिये मुझे दूसरा जन्म लेना पड़ेगा। "[1]

परंतु शंकर के सोचने और विप्रजीके समझनेमें सात साल गुजर जाते हैं और इन सात सालोंमें विप्रजी "विप्र" से महाजन और शंकर किसान से मजदूर बन जाता

१] प्रेमचन्द - सवा सेर गेहूँ, पृष्ठ १९०, संस्करण १९८० ।

है।

सात साल के बाद एक दिन मजदूरी से लौटते वक्त रास्तेमें शंकरसे विप्र महाजन मिलते हैं और उसे सात साल पहले उधार दिए हुए गेहूँ लौटाने की बात कहते हैं, -----

" शंकर कल आकर के अपने बीज-बेंग का हिसाब कर ले। तेरे यहाँ साढ़े पाँच मन गेहूँ कबके बाकी पड़े हुए हैं और तू देने का नाम नहीं लेता, क्या हजम करनेका मन है क्या ? "[१]

विप्रजीकी बातें सुनकर शंकर चकित हो जाता है और वह महाजन से कहता है कि, मेरे यहाँ किसी का एक पैसा या अनाज उधार नहीं है। वह आगे कहता है, ---

" महाराज, नाम लेकर तो मैंने उतना अनाज नहीं दिया, पर कई बार खलिहानों में सेर-सेर, दो-दो सेर दिया है। अब आप आज साढ़े पाँच मन माँगते हैं, मैं कहांसे दूँगा। "[२]

तब विप्रजी उसे खाता बही देखनेके लिए कहते हैं और बताते हैं, --

" तुम्हारे नाम बही में साढ़े पाँच मन लिखा हुआ है, जिससे चाहे हिसाब लगवा लो। दे दो तो तुम्हारा नाम छेक दूँ, नहीं तो और भी बढ़ेगा। "[३]

परंतु सवा पाँच मन गेहूँ लौटानेकी शंकर की औकात नहीं थी वह कहां से और कैसे वापस देगा। तभी विप्रजी उसे भगवान का वास्ता देकर कहत हैं, --

" जिसके घर से चाहे लाओ, मैं छटाक-भर भी न छोड़ूँगा, यहां न दोगे, भगवान् के घर तो दोगे। "[४]

१] प्रेमचन्द - सवा सेर गेहूँ, पृष्ठ ११०, सं. १९८०।

२] वही - वही , पृष्ठ १११, वही।

३] वही - वही , पृष्ठ १११, वही।

४] वही - वही , पृष्ठ १११, वही।

'शंकर' ग्राम का अनपढ़ और धर्मके प्रति आस्था रखनेवाला किसान था। ग्रामीण जनतामें यह अंधविश्वास था कि, ब्राम्हण जातिमें "ब्रम्ह" का स्वरूप विद्यमान होता है। इसीकारण वे ब्राम्हणको "ब्रम्ह" के समान पूज्य मानते थे।

विप्रजीसे भगवान का नाम सुनतेही शंकर सोचने लगता है , ----

" एक तो ऋण - वह भी ब्राम्हण का - बहीमें नाम रह गया तो सीधे नरक में जाऊँगा। "१

इस विचार से वह विप्र महाजन के साढ़े पाँच मन गेहूँ देने के लिए तैयार तो हो जाता है परंतु उसके पास न होने के कारण दूसरोंके पास से माँगकर देनेका वादा करता है। परंतु विप्रजी उसे एक दिन की भी मोहलत देने के लिए तैयार नहीं होते। बल्कि उससे दस्तावेज लिखकर माँगते हैं। अंतमें शंकर दस्तावेज लिखकर देनेके लिए तैयार हो जाता है। विप्रजी जो दस्तावेज तैयार करते हैं वह निम्न प्रकार है, ----

" हिसाब लगाया गया तो गेहूँ के दाम ६० हुए। ६०] का दस्तावेज लिखा गया, ३] सैकड़े सूद। साल-भरमें न देने पर सूद की दर २।।] सैकड़े।।] का स्टाम्प, १] दस्तावेज की तहरीर शंकर को उपरसे देनी पड़ी। "२

इसके बाद शंकर लगातार एक सालतक अपना पेट काट-काटकर कभी चबेनेपर तो कभी-कभी पानी पीकर गुजारा करता है। महाजन का कर्ज चुकाने के हेतू उसे तमाखू पीने की जो आदत थी वह भी छोड़ देता है, चिलम पटक देता है और हुक्का तोड़ देता है। इसतरह वह सालभरमें कड़ी मेहनत करने पर ६०] रूपये जमा करके महाजन के पास ले जाता है। परंतु सिर्फ ६० रूपये देखकर विप्र महाजन उसे कहते हैं, ----

" उरिन तो तभी होगे जब की मेरी कौड़ी-कौड़ी चुका दोगे। जाकर मेरे १५] रूपये और लाओ। "३

१] प्रेमचन्द - सवा सेर गेहूँ, पृष्ठ १९१ , सं. १९८० ।

२] वही - वही , पृष्ठ १९२ , वही ।

३] वही - वही , पृष्ठ १९३ , वही ।

तब शंकर विप्रजी से दया की भीख माँगते हुए बचे हुए पैसे चुकाने का वादा करता है। तब विप्रजी अपना महाजनी रूप प्रगट करते हुए शंकरसे कहते हैं, ------

" मैं यह रोग नहीं पालता, न बहुत बातें करना जानता हूँ। अगर मेरे पूरे रुपये न मिलेंगे तो आज से ३।।] रुपये सैंकड़े का ब्याज लगेगा। अपने रुपये चाहे अपने घरमें रक्खों, चाहे मेरे यहाँ छोड़ जाओ। "१

आखिर शंकर निराशावस्थामें ६० रुपये विप्रजीके पास छोड़कर चला जाता है। बाकी पैसों के लिए सारा गाँव छान मारता है परंतु उसे किसीसे भी पैसे नहीं मिलते। सालभर कष्ट करने के बाद भी जब वह विप्रजी के ऋण से मुक्त नहीं हो पाता तो उसकी आशा निराशाके रूपमें बदल जाती है। वह सोचता है सालभर परिश्रम करने के बाद भी ६० रुपये से अधिक इकट्ठा नहीं कर सका, तो अब कौनसा उपाय है जिसके द्वारा ज्यादह रुपये जमा हो सके। अगर कर्जा होना ही है तो मनभर का और सवामन का क्या फर्क पड़ता है । इस विचारसे वह जिन जरूरतों को एक सालतक टाल रखा था उन जरूरतों को पूरा करनेमें लग जाता है। कभी कपड़े लाता है, कभी खाने की कोई चीज लाता है। जहाँ वह पहले तमाखू पिया करता था अब गाँजा और चरस की आदतें उसे लग जाती है॥ रुपये अदा करने की कोई भी चिन्ता वह छोड़ देता है। कामपर जाने के लिए भी वह टाल-मटोल करता रहता है।

इसीमें तीन साल बीत जाते हैं और फिर एक दिन अचानक उसे महाजनका बुलावा आता है। जब वह उनके पास जाता है तो वे उसे हिसाब दिखाते हैं। हिसाब देखकर शंकर उन्हें कहता है कि, यह ऋण इस जन्म में तो न चुका पाऊँगा। तब विप्रजी उसे कहते हैं, मूल न सही सूद तो देना ही पड़ेगा। तब शंकर उन्हें एक बैल और झोपड़ी देनेके लिए तैयार होता है। वह उन्हें कहता है, मेरे पास तुम्हें देने के लिए इसके सिवाय कुछ नहीं है। तो वे उसे कहते हैं, ----

---

१] प्रेमचन्द - सवा सेर गेहूँ, पृष्ठ १९३ , सं. १९८० ।

" मुझे बैल-बधिया लेकर क्या करना है। मुझे देने को तुम्हारे पास बहुत कुछ है। कुछ नहीं है, तुम तो हो। आखिर तुम भी कहीं मजदूरी करने जाते ही हो, मुझे भी खेती के लिए मजूर रखनाही पड़ता है। सूदमें तुम हमारे यहां काम किया करो, जब सुभीता हो मूलको दे देना। सच तो यों है कि अब तुम किसी दूसरे जगह काम करने नहीं जा सकते जबतक मेरे रुपये नहीं चुका दो। "[१]

विप्रजी के इस वक्तव्यपर शंकर उन्हें पूछता है कि, अगर मैं आपके पास सूदमें काम करूँगा तो खाऊँगा क्या ? तो विप्रजी उसे घरवालोंकी याद दिलाते हैं और कहते हैं तुम्हारी घरवाली और लड़के भी काम करेंगे। उनके यहां काम करनेके बदलेमें उसे साल में एक कम्बल, एक सिरजई और हररोज आध सेर का जौ देनेका वादा करते हैं। शंकर इस बातपर सोचनेके बाद कहता है, ---

" महाराज, यह तो जनमभर की गुलामी हुई। "[२]

परंतु शंकर को विप्रजीका गुलाम बननेके सिवा और कोई चारा नहीं था और वह दूसरे दिन से ही उनके यहां लगातार बीस सालतक काम करता रहता है। उसके मर जानेके बाद फिर उसका बेटा उनका गुलाम बन जाता है।

निष्कर्ष = :
=====

इस कहानीमें कहानीकारने महाजनी शोषण तथा लूट का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करते हुए ग्रामीण लोगोंकी धर्मके प्रति आस्था और उनकी आदतोंका चित्रण शंकरके माध्यमसे हमारे सामने रखा है। कहानीके अंतमें कहानीकारने इस कहानीकी घटना सत्यपर आधारित होनेकी बात कही है। अत: आज भी हम देखते हैं, दुनिया में "शंकर" और "विप्र महाजन" जैसे लोग आज भी हमें जगह-जगह दिखाई देते हैं।

८]" जेल " = :
======

सन् १९३१ में लिखित "जेल" कहानीमें "क्षमा" और "मृदुला" दो

१] प्रेमचन्द - सवा सेर गेहूँ, पृष्ठ ११४-११५, सं १९८०।

२] वही - वही , पृष्ठ ११५ , वही ।

प्रमुख नारी पात्र है।

कहानीकी नायिका "क्षमा" विधवा है, जो अकेली रहती है। जालियनवाला बाग हत्याकांड में उसका पति और पुत्र दोनो मारे जाते हैं। दोनों के मृत्युके पश्चात् वह अपना सारा वक्त जातिसेवा में लगा देती है। उसे एक व्याख्यान देने के अपराध में सालभर की सजा हो जाती है।

कहानी की दूसरी नायिका "मृदुला" धरना देते वक्त पकड़ी जाती है और उसे भी सजा हो जाती है। इन दोनों की मुलाकात जेलमें हो जाती है। मृदुला जब जेलसे बरी हो जाती है तब वह क्षमा से फिर मिलनेका वादा कर घर लौटती है। परंतु तीन ही महिने के अंदर अपनी सास, पति तथा पुत्र को गँवाकर विधवा बनकर फिर जेलमें जुलूस निकालने के अपराध में आ जाती है। जब क्षमा से उसकी मुलाकात होती है तो वह सरकार के अत्याचारोंका वर्णन करती हुई उसे कहती है, ------

" परसों शहर में गोलियाँ चलीं। देहातों में आजकल संगीनों की नोक पर लगान वसूल किया जा रहा है। किसानोके पास रुपये हैं नहीं, दें तो कहाँ से दें। अनाज का भाव दिन-दिन गिरता जाता है। पौने दो रुपये में मनभर गेहूँ आता है। मेरी उम्र ही अभी क्या है, अम्माजी भी कहती हैं कि अनाज इतना सस्ता कभी नहीं था। खेत की उपज से बीजों तक के दाम नहीं आते। मेहनत और सिंचाई इसके ऊपर। गरीब किसान लगान कहाँ से दें। "[१]

गाँव के किसान सरकार के अत्याचार से मुक्त होने के लिए अपनी जमीन, घर और सम्पत्ति भी देने के लिए तैयार थे। फिर भी पुलिस द्वारा अत्याचार बन्द नहीं हो रहा था। इस अत्याचार के बारेमें मृदुला क्षमा से कहती है, ---

" सरकार को तो अपने कर से मतलब है। प्रजा मरे या जिए, उससे कोई प्रयोजन नहीं। अफसर जमींदारों ने तो लगान वसूल करने से इनकार कर दिया है। अब पुलिस उनकी मदद पर भेजी गई है। भैरोगंज का सारा इलाका लूटा जा रहा है। मरता क्या न करता, किसान भी घर-बार छोड़-छोड़कर भागे जा रहे है। एक किसान के घर में घुसकर कई कांस्टेबलों ने उसे पीटना शुरू किया। बेचारा

१] प्रेमचन्द - जेल, पृष्ठ १०, संस्करण १९७९ ।

बैठा मार खाता रहा। उसकी स्त्री से न रहा गया। शामत की मारी कांस्टेबलों को कुवचन कहने लगी। बस, एक सिपाही ने उसे नंगा कर दिया।......बेचारा बेदम पड़ा हुआ था। स्त्री का चिल्लाना सुनकर उठ बैठा और उस सिपाही को धक्का देकर जमीन पर गिरा दिया।"१

उसका पति सिपाही को धक्का देकर जमीन पर जब गिराता है तब सब कांस्टेबल मिलकर उसे इतना मारते हैं कि वह मर जाता है। उस किसान के मरने पर गांववाले संतप्त हो जाते हैं और कांस्टेबलों को घेर लेते हैं। तब कांस्टेबल गोलियाँ चलाते हैं। उसमें बारह आदमी मर जाते हैं।

मृदुला उसे आगे कहती है, ---

" इन छोटे-छोटे आदमियों को इसीलिए तो इतने अधिकार दिए गए हैं कि उनका दुरुपयोग करें। आधे गांव का कत्लेआम करके पुलिस विजय के नगाड़े बजाती हुई लौट गई। गांववालों की फरियाद कौन सुनता। गरीब हैं, बेकस हैं, अपंग हैं, जितने आदमियों को चाहो मार डालो। अदालत और हाकिमों से तो उन्होंने न्याय की आशा करना ही छोड़ दिया। आखिर सरकार ही ने तो कांस्टेबलों को यह मुहिम सर करने के लिए भेजा था। वह किसान की फरियाद क्यों सुनने लगी ? "२

जिनकी मृत्यु हो जाती है उन की लाशोंका जुलूस निकालने के लिए पुलिस का अध्यक्ष अनुमति नहीं देता। बहुत लोग इकट्ठे हो जाते हैं, उसमें मेरा पति भी शामिल होता है। जुलूस को हटानेके लिए पुलिस गोलियाँ चलाती हैं उसमें मेरे पति, सास और पुत्र तीनों मारे जाते हैं। मेरा परिवार नष्ट होनेपर मैं फिर सत्याग्रहियों के दल में शामिल हो गई हूँ और जुलूस का नेतृत्त्व करनेके अपराध में पकड़ी गयी हूँ।

निष्कर्ष = : ब्रिटिश सरकार द्वारा कृषकोंपर किये गये अत्याचारोंका यथार्थ

१] प्रेमचन्द - जेल, पृष्ठ ११, सं. १९७९ ।

२] वही - वही ११-१२, वही ।

वर्णन करते हुए कहते हैं कि, इस युगमें ब्रिटिश सरकार का अपना कानून था, जो कि केवल सरकारके ही पक्ष में था। इसमें ग्रामीण जनता के हितों की तरफ कोई ध्यान नहीं देता था।

x=x=x=x=x=x=x=x

परिवार का चित्रण

प्रेमचन्द के समय संयुक्त परिवार की प्रथा थी। यह प्रथा भारतीय ग्रामों के अन्तर्गत पारस्परिक स्नेह की प्रतीक बनी हुई थी। इस परिवारमें एक "मुखिया" होता था, जिसके हाथमें सम्पूर्ण परिवार की व्यवस्था होती थी। गांवमें उसीके नाम से उसका परिवार पहचाना जाता था। उसके परिवार की उन्नति-अवनिति का सारा श्रेय उसीपर अवलंबित रहता था। वह खुद तो श्रम करता था, साथ ही अपने परिवारमें होनेवाले सदस्योंसे भी श्रम करवा लेता था। मुखिया की पत्नी घर की "मुखियारीन" कहलायी जाती थी। इन दोनों की आज्ञा से सारा परिवार चलता था। दोनोंकी आज्ञा के बिना घर का एक पत्ता भी नहीं हिल सकता था। परिवारमें बूढ़े माता-पिता उसके भाई-बहन, बहुएँ और उनके बच्चे होते थे।

परिवार के सभी सदस्योंको समान अधिकार दिया जाता था। तथा हर व्यक्ति का परिस्थितिनुसार उत्तरदायित्व होता था। यदि किसी कारणवश परिवार का विघटन होता, तो विघटन के समय थोड़ीसी भी असमानता हो तो विद्रोह निर्माण हो जाता था। प्रेमचन्द ने अपने कुछ कहानियोंमें इस संयुक्त परिवार और उनमें होनेवाले अंतर्गत संघर्षका यथार्थ चित्रण निम्नलिखित कहानियोंमे प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

१] " शंखनाद " = :

इस कहानी का एक पात्र "भानु चौधरी" गांवके मुखिया थे। गांवमें उन्हें बड़ा सम्मान था। उनकी मर्जीके बिना गांव का एक पत्ता भी नहीं हिलता था।

चौधरीके तीन पुत्र थे। बड़ा लड़का "विज्ञान" वकिल था, मंझला "शान" कृषि विभाग का अधिकारी था, तो तीसरा "गुमान" आवारा था। जिसके कारण उसके पत्नी को काफी तकलीफ उठानी पड़ती थी। घर का सारा काम उसेही करना पड़ता था।

एक बार छोटा लड़का "गुमान" पिता से पैसे लेकर कपड़े की दुकान खोलता है। परंतु ठीक तरह से काम न करने के कारण तीन महिने के अंदर ही अंदर उसके दुकान का धज्जा उड़ जाता है और फिर वह आवारा घूमने लगता है जिसके कारण उसके भाई और भावजों से उसे कटुवाक्य सुनने पड़ते हैं। परंतु उसके ऊपर कोई असर नहीं पड़ता। यह देखकर एक दिन भानु चौधरी गुमानके बारेमें फैसला करनेके लिए घरके सभी लोगों को इकट्ठा करते हैं। इकट्ठा होनेके बाद वह गुमान कोई काम करे ऐसा उपाय बतानेके लिए कहते हैं। तब बड़े लड़के की पत्नी अपने ससुर से कहती है, ----

" गुमान का तुम्हारी कमाई में हक है, उन्हें कंचन के कौर खिलाओ और चाँदी के हिंडोले में झुलाओ। हमें न इतना बूता है, न इतना कलेजा। हम अपनी झोपड़ी अलग बना लेंगे। हाँ, जो कुछ हमारा हो, वह हमको मिलना चाहिए। बाँट-बखरा कर दिजिए। बला से चार आदमी हँसेंगे, अब कहाँ तक दुनिया की लाज ढोवें ? "[१]

बड़ी बहू का यह उत्तर सुनकर चौधरी दूसरे बेटेकी राय पूछते हैं तो उसकी पत्नी अपनी जेठानी की बात को सही कहती है। बहुओंकी बातें सुनकर

१] प्रेमचन्द - शंखनाद, पृष्ठ १६८, सं. १९७९ ।

गुमान से पूछते हैं, तो वह भी भाईयोंसे अलग होनेकी इच्छा प्रगट करता है।

एक दिन मिठाईवाला अपना खोंचा लेकर चौधरीके द्वारपर आता है। गांव के सारे बालक मिठाई का लाभ उठाते हैं। यह देखकर गुमान का बेटा "धान" अपने माँ के पास जाकर मिठाई के लिए पैसे माँगता है लेकिन उसके पास पैसे न होने के कारण वह दे नहीं पाती और "धान" मिठाई खरीद नहीं पाता। उसकी माँ उसे समझाने की कोशिश करती है, परंतु वह जोर-जोरसे रोने लगता है। उसका रोना देखकर वह कहती है, ----

" चुप रह अभागे! तेरा ही मुँह मिठाई खाने का है? अपने दिन को नहीं रोता, मिठाई खाने चला है। "[१]

पत्नी की बातें सुनकर गुमान सचेत होकर उसे कहता है, ----

" परमात्मा ने चाहा तो कल से लोग इस घरमें मेरा और मेरे बाल-बच्चों का भी आदर करेंगे। तुमने आज मुझे सदा के लिए जगा दिया, मानो मेरे कानों में शंखनाद कर मुझे कर्म-पथ में प्रवेश करने का उपदेश दिया हो। "[२]

निष्कर्ष = :
======

संयुक्त परिवार में काम न करनेवाले व्यक्ति के साथ किसतरह बर्ताव किया जाता है इसका यथार्थ चित्रण कहानीकारने इस कहानीमें करनेका प्रयास किया है।

२] " दो भाई " = :
========

इस कहानी की नायिका "कलावती" को केदार और माधव दो बेटे थे। दोनों भाईयोंमें इतना स्नेह था कि, दोनों साथ-साथ पाठशाला जाते,

---

१] प्रेमचन्द - शंखनाद, पृष्ठ १७२, सं. १९७९।
२] वही - वही, पृष्ठ १७२, वही।

साथ-साथ खाते और हरवक्त साथ-साथ रहते थे। दोनों की शादी भी एकसाथ ही हो जाती है।

केदार की पत्नी का नाम चम्पा था, वह अमितभाषिणी और चंचला थी। माधव की पत्नी का नाम श्यामा था, वह रूपवती, सुशील और शांतस्वभाव की थी। आगे चलकर माधव को सन्तानप्राप्ति हो जाती है। उसकी पत्नी श्यामा अपने लड़कोंको सँवारने-सुधारनेमें लगी रहती है और नि:संतान चम्पा को चूल्हा जलाना और चक्की पीसने का काम करना पड़ता था। इसीकारण उसके मुँह से कटु शब्द निकल जाते थे। श्यामा सुनती थी और चुपचाप सह लेती थी। परंतु उसकी यह सहनशीलता चम्पा के क्रोध को शांत करने के बदले और बढ़ाती थी। यहांतक की इन दोनोंमें इतना द्वेष बढ़ जाता है कि, एक दिन घरमें दो अलग-अलग चूल्हे जलने लगते हैं। यह देखकर दोनों भाई उस दिन दाने की सूरत भी नहीं देखते और माँ कलावती सारे दिन रोती रहती है।

कई वर्ष बीत जाते हैं, -- " दोनों भाई जो किसी समय एकही थालीमें खाते थे और एकही छाती से दूध पीते थे, उन्हें अब एक घरमें, एक गांवमें रहना कठीन हो गया। "[१]

परंतु कुल को कलंक न लगे इसीलिए ईर्ष्या और द्वेष को दबानेकी दोनों व्यर्थ चेष्टा करते थे। उन लोगोंमें अब भातृ-स्नेह न रहा था। जब वे दोनों बच्चे थे तब उनमें जो स्नेह था उसका वर्णन कहानीकारने निम्नलिखित प्रकारसे किया है, ---

" दोनों भाई जब लड़के थे, तब एक को रोते देख, दूसरा भी रोने लगता था, तब वह नादान, बेसमझ और भोले थे। आज एक को रोते हुए देख, दूसरा हँसता और तालियाँ बजाता। अब वह समझदार और बुध्दिमान हो गए थे। "[२]

१] प्रेमचन्द - दो भाई, पृष्ठ २१६, सं. १९७९ ।

२] वही - वही, पृष्ठ २१६-२१७, वही ।

इसप्रकार उन्हें अब अपने - पराये की पहचान हो गयी थी, इधरे माधव की स्थिति शोचनीय थी, उसके परिवार का खर्च अधिक और आमदनी कम थी। उसे चार पुत्र और चार पुत्रियाँ थी। पहली कन्या के विवाह के समय उसकी दो पाई जमीन विवाहमें भेंट हो गयी थी। दूसरी कन्या के विवाह में शेष जमीन निकल गयी थी। उसके एक साल के बाद तीसरी कन्या का विवाह हुआ तो उसके पास पेड़-पत्ते भी न बचे। उसकी चौथी कन्या का अभी गौना भी न हुआ था, तो उसे दो साल बकाया लगान का वारंट मिला था। अत: वह कन्या के गहने गिरवी रखकर इस आपत्तिसे गला छुड़ा लेता है।

यह देख केदार की पत्नी चम्पा जाकर रिश्तेदारों को इस बात की खबर देती है। दूसरेही दिन नाई और ब्राम्हण माधव के दरवाजे पर आकर पैसों के लिए बैठ जाते हैं। परंतु माधव के पास उन्हें देने के लिए न ही रुपये थे, न कोई जायदाद। अत: विवश होकर वह अपने भाई केदार के पास चला जाता है, तो केदार उसे घर गिरवी रखनेके लिए कहता है। माधव अपना घर रखनेके लिए तैयार होता है।

दूसरे ही दिन केदार के द्वारपर गांवके मुखिया और नंबरदार तथा मुंशी दातादयाल रेहन का मसविदा बनाने के लिए आते हैं। दातादयाल रेहन माधव के नाम लिखते हैं और रेहन लिखानेवाले का नाम पूछते हैं, तो केदार अपना नाम बताता है। माधव केदारसे यह बात सुनकर अचरज में पड़ जाता है। सभी लोग भी विस्मय से देखने लगते हैं। यह देख माँ कलावती मन ही मन कहती है, -----

" क्या ऐसे पुत्रों को मेरी ही कोख में जन्म लेना था। "[1]

निष्कर्ष = :

कहानीकारने इस कहानीमें जन्म से एक दूसरे के ऊपर प्रेम करनेवाले दो भाई शादी हो जाने के बाद अपनी बिबियोंके बहकावे में आकर किसतरह एक-दूसरे को बरबाद करने पर तुले रहते हैं इसका चित्रण प्रस्तुत किया है।

१] प्रेमचन्द - दो भाई, पृष्ठ २२१, सं. १९७९ ।

3] " अलग्योझा " = :

इस कहानी का नायक "रग्घू" भोला महतो का पुत्र था। दस साल की आयुमें ही उसकी माँ का देहांत हो जाता है। कुछ ही दिनों में पिता "पन्ना" नामक एक रूपवती से शादी करते हैं।

विमाता के आनेपर गुल्ली-डंडा खेलनेवाला रग्घू खेल-कूद छोड़कर घर का सारा काम करने लगता है। इतना काम करनेपर भी उसकी विमाता उसके बारेमें उसके पितासे शिकायतें करती थी। और उन शिकायतों पर भोला महतो विश्वास करता था। पन्नाने गांववालों को भी अपनी तरफ कर लिया था, जिसके कारण ये गांववाले भी रग्घू की तरह-तरह से बुराईयाँ निकालते रहते थे। इसतरह पिता, विमाता और गांववालों की ओर से उपेक्षित होने के कारण रग्घू के मनमें पिता और विमाता के प्रति कोई अलगाव नहीं रहता।

जब वह अठारह साल का हो जाता है तो उसके पिता का देहांत हो जाता है और पन्ना के सामने अपने चार बच्चों के उदरनिर्वाह की समस्या खड़ी हो जाती है। परंतु पिता की मृत्यु के बाद रग्घू विमाता और सौतेले भाईयों के साथही रहने लगता है, जिसके कारण उसमें और विमाता में जो दूरी थी वह रग्घूके अपनेपनसे दूर होती है। इसप्रकार पाँच साल बीत जाते हैं। रग्घू का विवाह पहलेही हो चुका था लेकिन उसकी पत्नी मायकेमें ही थी। अत: विमाता बहू को लाने के लिए कहती है परंतु रग्घू इस बातको टाल देता है, क्योंकि अपने स्त्रीके रंग-ढंग का पता उसे दूसरोंसे पहलेही मालूम होनेके कारण वह ऐसी औरत को घरमें लाकर घर की शांति को नष्ट करना नहीं चाहता था। यह देखकर पन्ना खुद जाती है और उसके पत्नी को ले आती है। रग्घू की पत्नी भी पन्ना जैसी ही खुबसूरत थी जिसका नाम "मुलिया" था। ऊपर से सुन्दर लगनेवाली मुलिया भीतर से कटु थी। जब वह मैके में थी तभी वह अपने ससुराल का सारा हाल मालूम कर चुकी थी। जिसके कारण उसके मनमें सास के बारेमें एक प्रकारका व्देषभाव निर्माण हो गया था। अत: वह अपनी सास और

देवर के साथ ठीक तरह से व्यवहार नहीं करती। इसका एक उदा. देखिए ---

" मेरा शौहर छाती फाड़कर काम करे, और पन्ना रानी बनी बैठी रहें, उसके लड़के रईसजादे बने घूमें। " [1]

मुलिया से यह बरदाश्त नहीं हो जाता था, अत: वह किसी की गुलामगी न करनेका तय कर लेती है, जिसके कारण रग्घू को जिस बात का डर था वही हो जाने के कारण उसके मनपर आघात हो जाता है। वह मुलिया के अलग्योझे के प्रस्ताव को हर-तरह से टालने की कोशिश करता है। तो मुलिया उसे कहती है, ---

" अब तो तभी मुँह में पानी डालूँगी, जब घर अलग हो जायगा। " [2]

मुलिया की इस बात का रग्घू को बहुतही दु:ख होता है, क्योंकि गांव के दो-चार परिवारों को अलग हो जाने के बाद क्या हाल हो जाता है यह उसने अपनी आँखों से देखा था। वह जानता था कि, रोटी के साथ लोगों के हृदय भी अलग हो जाते हैं। इसीलिए वह अपनी पत्नी से कहता है, ----

" मैं अपने घरवालों से अलग नहीं हो सकता। जिस दिन इस घर में दो चूल्हे जलेंगे, उस दिन मेरे कलेजे के दो टुकड़े हो जायँगे। मैं यह चोट नहीं सह सकता। तुझे जो तकलीफ हो वह मैं दूर कर सकता हूँ। माल-असबाब की मालकिन तू है ही अनाज पानी तेरे ही हाथ है, अब रह क्या गया है ? " [3]

परंतु आखिर होनी को टाल कौन सकता है। अंतमें उसके घरमें अलग्योझा हो ही जाता है। जहां मिल-जुलकर खाना-पीना होता था वहां अब सूनापन नजर आ आने लगता है। आँगनमें दीवार खिंच जाती है, खेतोमें मेड़ें डाली जाती है, बैल-बधिया बाँट लिये जाते हैं। अलग्योझे के कारण रग्घू की मनोदशा वेदनापूर्ण बन जाती है।

१] प्रेमचन्द - अलग्योझा, पृष्ठ १७, सं. १९८८।

२] वही - वही , पृष्ठ २०, वही।

३] वही - वही , पृष्ठ २१, वही।

इसी तरह पाँच साल गुजर जाते हैं। इन पाँच सालोंमें बड़ी मेहनत और चिंता के कारण उसका स्वास्थ बिगड़ जाता है और कुछ ही दिनों में उसका देहांत हो जाता है, जिसके कारण मुलिया के परिवार का आधार चला जाता है। उसके मृत्यु के बाद मुलिया और बच्चे पन्ना के संरक्षण में आकर रहने लगते हैं। कुछ दिनों बाद पन्ना देवर केदार के साथ मुलिया की सगाई तय कर देती है।

निष्कर्ष = :
=====

इस कहानी में कहानीकारने विमाता का व्यवहार और बादमें उसका मन परिवर्तन दिखाते हुए अंतमें आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का समन्वय प्रस्तुत किया है।

४] " बड़े घर की बेटी" = :
==========

कहानी की नायिका "आनंदी" के ससुर "बेनीमाधव सिंह" गौरीपुर गांव के केवल नामके जमींदार थे। उनके पितामह किसी समय बड़े धन-धान्य संपन्न थे। बेनीमाधव सिंह अपनी आधी से अधिक संपत्ति वकिलों की भेंट कर चुके थे। उनकी वर्तमान आय एक हजार रूपए वार्षिक से अधिक न थी। उनकी पत्नी चल बसी थी। उन्हें "श्रीकंठसिंह" और "बिहारीलाल" नामके दो पुत्र थे।

श्रीकंठसिंह बी.ए. होकर शहरके किसी दफ्तरमें क्लर्क की नौकरी करता था। उसकी शादी एक उच्च कुल की लड़की "आनंदी" से हो गयी थी। उनके दूसरे पुत्र को पढ़नेमें दिलचस्पी नहीं थी, उसे पहलवानी का शौक था।

एक दिन वह चिड़िया पकड़कर ले आता है और भाभी से जल्दी पकाने के लिए कहता है। वह पकाकर तो देती है, परंतु घी कम पड़ जाता है। जब बिहारीलाल खाना खानेके लिए बैठता है तब व्यंजनमें घी कम देखकर उसे पूछता है, ----

उसमें ज्यादा घी क्यों नहीं डाला। तो वह उसे जो कुछ था सब उसमें डाल दिया बताती है, तो बिहारीलाल उसे पूछता है, ---

" अभी परसों घी आया है। इतने जल्दी उठ गया ? "[१]

तो आनंदी उसे कहती है, ---

" आज तो कुल पाव भर रहा होगा। वह सब मैंने मांस में डाल दिया।"[२]

यह सुनकर बिहारीलाल उसे कहता है, --

"मैके में तो चाहे घी की नदी बहती हो। "[३]

देवरके मुँह से मैके का नाम सुनकर आनंदी उसे कहती है, ----

" वहाँ इतना घी नित्य नाई-कहार खा जाते हैं। "[४]

इसतरह बातों-बातों में बात बढ़ जाती है और बिहारीलाल गुस्सेमें आकर खडाऊँ फेंककर उसे मारता है और खाना वही छोड़कर चला जाता है। आनंदी भी रूठकर बैठ जाती है। उसका पति हर शनिवार के दिन घर आता था। शनिवार के दिन घर आनेके बाद वह पिताके चरण छूता है, तो पिताजी उसके पास बहूकी शिकायत करते हैं, लेकिन अपने बेटे बिहारी की भूलके बारेमें कुछ भी नहीं कहते।

जब वह घरमें उत्पन्न विद्रोहके बारेमें अपनी पत्नीसे पूछता है तो वह सारा वृत्तांत बता देती है। उसकी बातें उसे ठीक लगती हैं और दूसरे दिन श्रीकंठसिंह घर छोड़कर चले जाने की बात पिता से करता है।

परिवारको टूटते हुए देखकर पिता को बहुतही दु:ख होता है। भाईकी अलग होनेकी बात सुनकर बिहारीलाल रोने लगता है। उसे अपनी गलती का एहसास होनेके बाद वह अपने भाभीसे कहता है, ----

---

१] प्रेमचन्द - बड़े घर की बेटी, पृष्ठ १४४, सं. १९७९ ।

२] वही - वही , पृष्ठ १४४, वही ।

३] वही - वही , पृष्ठ १४५, वही ।

४] वही - वही , पृष्ठ १४५, वही ।

"भाभी, भैया ने निश्चय किया है कि वह मेरे साथ इस घरमें न रहेंगे। अब वह मेरा मुँह नहीं देखना चाहते, इसलिए अब मैं जाता हूँ। उन्हें फिर मुँह न दिखाऊँगा । मुझसे जो कुछ अपराध हुआ, उसे क्षमा करना।"[१]

और वह घर छोड़कर जाने लगता है तो आनंदी का दिल भी पसीज जाता है और वह उसे नासमझ समझकर माफ कर देती है। पतिसे उसे रोकनेके लिए कहती है, परंतु वह रोकता नहीं यह देखकर वह खुद आकर उसका हाथ पकडकर उसे रोकती है। यह देखकर बेनीमाधव सिंह कहते हैं, -

"बडे घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं, बिगड़ता काम बना लेती हैं।"[२]

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने "आनंदी"को संयुक्त परिवार प्रणाली का आदर्श प्रस्तुत करते हुए चित्रित करनेका प्रयास किया है।

४. नारी चित्रण

प्रेमचंन्द युगमें भारतीय समाज अत्यंत अव्यवस्थित था। देशकी राजनीतिक और सामाजिक स्थितिके साथ सांस्कृतिक स्थिति का भी ह्रास होता जा रहा था। किसी भी देश की उन्नत्ति या अवनीति

---

१. प्रेमचन्द - बड़े घर की बेटी, पृ. १४५, सं. १९७९.।
२. प्रेमचन्द - वडे घर की बेटी, पृ. १५१, सं. १९७९ ।

ARR. BAL... KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR.
...VAJI UN... KOLHAPUR

उस देशकी संस्कृतिपर अवलंबित होती है।

भारतीय पुरुषप्रधान संस्कृतिमें "नारी" को "गौन" स्थान था। समाजमें वह केवल भोग की वस्तु मानी जाती थी। विवाह के पूर्व वह माता-पिता और विवाहके पश्चात् पति उसका आश्रयदाता होता है। वह अपने "पतिव्रत" धर्मको बनाये रखनेके लिए बड़े-से-बड़ा त्याग करनेके लिए तथा अप्रिय-से-अप्रिय कार्य करनेके लिए भी तैयार होती है जिसका चित्रण प्रेमचन्दने अपनी निम्नलिखित कहानियोंमें किया है।

१. "माता का हृदय" :-

कहानी की नायिका "माधवी" के पति २२ वर्ष पहले गुजर गये थे। उसने अपने "आत्मानंद" नामक बच्चेको अनेक कष्टोंको उठाकर बड़ा किया था। सारा मुहल्ला उसकी मुक्त कंठसे प्रशंसा करता था।

वह निर्भिक, स्पष्टवादी और नि:स्वार्थी स्वदेशप्रेमी था। उसके देशकार्य और राजनीतिक लेखोंके कारण पुलीस उससे सतर्क रहती थी। एक बार जिलेमें एक भयंकर डाका पडता है। आत्मानंद के घर की तलाशी पुलीस लेती है तब उन्हें कुछ पत्र और लेख मिलते हैं, जो डाके के बीजक सिध्द होते हैं।

पुलीस सुपरिटेंडेंट "वागचो" लगभग बीस युवकोंको डाके के बारेमें पकड लेता है और मुखियाके रूपमें आत्मानंद को ठहराकर आठ साल की सजा देा जाती है। आत्मानंद की माता माधवीका पुलिस सुपरिटेंडेंट मि. वागचीं के अत्याचार का बदला लेना यही जीवनका लक्ष्य बन जाता है। वैधव्यके २२ साल घरमें काटनेके बाद वह इसी उद्देश्यसे घरसे बाहर निकलती है और वागची के घर नौकर बनकर उसके बच्चेको संभालनेके लिए रहने लगती है। मि. वागची को कई लड़के हो चुके थे, उनमेंसे केवल एकही बचा था। वह और उनकी पत्नी बच्चे जिंदा रहने के लिए टोना-टोटका, दुआ-तावीज, जन्तर-मन्तर आदि सभी उपायोंको अपनाते थे। कुछही दिनोंमें उनका बच्चा माधवीसे इतना हिल-मिल जाता है कि, एकक्षण के लिए भी उससे दूर नहीं रहता। वह भी उस बच्चे से

इतना स्नेह करती थी कि, उसके अमंगल की कल्पना भी नहीं कर सकती थी। उसके पुत्रपर अत्याचार करनेवाले बागची पर उसे क्रोध आता था परंतु उसके परिवार का हाल देखकर उसे दया आती थी।

एक दिन माधवी अपने घर चली जाती है, तो बच्चा रोने लगता है। एक नौकर उसे बाहर ले जाकर हरी - हरी घासपर बिठाता है। बारीश होनेके कारण जमीन गीली हो गई थी। स्थान-स्थान पर पानी जम गया था। उस पानीमें बच्चा लोटने लगता है। उसके साथ आया हुआ नौकर आदमियोंके साथ गपशप करनेमें मशगुल होकर काफी देर बातें करता रहता है, बच्चे की तरफ उसका ध्यान नहीं जाता। कुछ देर बाद वह उसे घर ले जाता है। काफी देर पानीमें खेलने के कारण उसे सर्दी हो जाती है। जब रातको माधवी आकर देखती है तो बच्चा खाँसता हुआ दिखाई देता है। आधी रात उसके गलेसे "घुरघुर" की आवाज निकलने लगती है, तो माधवी आग जलाकर बच्चेको सारी रात सेंकती रहती है। तीन दिनमें बच्चा अच्छा हो जाता है। उस समय माधवीने जो सेवा की उसका चित्रण कहानी-कारने निम्नलिखित प्रकारसे किया है, -

"सच पूछो तो माधवी को तपस्याने बच्चेको बचाया। माता सोती, पिता तो जाता, किन्तु माधवी की आँखोंमें नींद न थी, बच्चे की बलाएँ लेती थी, बिलकुल पागल हो गई थी। यह वही माधवी है, जो अपने सर्वनाश का बदला लेने आयी थी। अपकार की जगह उपकार कर रही थी। विष पिलाने आयी थी, सुधा पिला रही थी।"[१]

एक दिन प्रातःकाल बागचीकी पत्नी माधवीको बच्चा गोद देनेकी बात कहकर उसे घर ले जानेके लिए कहती है। माधवी दूध गरम करके बच्चेको उठाने जाती है, तो बच्चा ठंडा पड़ा हुआ दिखाई देता है, तो वह उसे गोदमें चिपटा लेती है और रोने लगती है। जो माधवी शुरूमें बागचीके बच्चेका अहित करने आयी थी वही अपनी मनोकामना पूरी होनेपर भी खुशीसे फूलनेके बजाय

---

१. प्रेमचन्द - माता का हृदय, पृ. १०१-१०२, सं. १९८०।

दुःखी होती है। उसे घोर पीड़ा होती है, जितनी उसे अपने पुत्रकी जेलयात्रा से हुई थी।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने "माधवी" के माध्यमसे नारी हृदय के वात्सल्य, मातृत्व, त्याग आदि भावोंने द्वेष की भावनाको नष्ट होते हुए चित्रित करनेका प्रयास किया है।

२ "राजा हरदौल"

"जुझारसिंह" बुंदेलखंड के पुराने राज्य ओरछाका राजा था, जो इस कहानीका नायक है, बड़ा साहसी और बुध्दिमान था। जिसका काल दिल्लीके बादशाहा के समय का था। जब शाहजहाँ लोदी बगावत करके शाही मुल्क को लूटता हुआ ओरछेकी ओर निकला तब राजा जुझारसिंहने उसका सामना किया उसके इस कामके कारण शाहजहाँने दक्षिण का शासनभार उसे सौंप दिया। वह अपने छोटे भाई "हरदौलसिंह" के सिरपर अपनी पगड़ी रखकर उसके हाथोंमें ओरछे का शासन देकर चला जाता है।

उसके चले जानेके बाद हरदौल शासन करने लगा और थोड़ेही दिनोंमें न्याय और वात्सल्यसे उसने प्रजा का मन जीत लिया। जिसके कारण धीरे-धीरे लोग राजा जुझारसिंह को भूल गये।

फाल्गुनके महीनेमें दिल्ली का नामवर पहलवान "कादिरखाँ" ओरछेमें आया। दिल्ली से ओरछेतक उसे कोई जीत न सका था। ओरछेमें "कालदेव" और "भालदेव" नामके दो पहलवान थे, जिन्होंने सैकड़ो मैदान मारे हुए थे। परंतु कादिरखाँ के साथ लड़ते हुए दोनों उसके हाथों मारे जाते हैं तो खुद "राजा हरदौल" अपने भाई जुझारसिंह की तलवार भाभी "कुलिना" से लेकर मैदानमें उतर पड़ता है और उसकी जीत हो जाती है। हरदौलके इस विजयने

A
11736

उसकी प्रतिष्ठा और भी बढ़ती है और वह अपनी जाति का वीरवर और शिरमौर बन जाता है।

उधर राजा जुझारसिंह भी दक्षिणमें अपनी योग्यताका परिचय देता है और एक साल के बाद बादशाह से आज्ञा लेकर ओरछेकी तरफ आनेके लिए निकल पड़ता है। ओरछेके जंगलमें पहुँचकर दोपहरके समय वह घोड़ेसे उतरकर एक पेड़की छाँवमें बैठता है। ठीक उसी समय हरदौल भी जीत की खुशी में अपने सैकड़ों बुंदेला सरदारोंके साथ शिकार खेलने निकला था। वह भी उसी स्थानपर आता है। दूरसे राजा जुझारसिंह को अकेले बैठे देखकर कोई यात्री बैठा होगा ऐसा समझकर राजा हरदौल की आँखे धोखा खाती हैं। पास आकर वह उसे पूछना चाहता है तभी उसकी आँखे भाई की आँखोंसे मिल जाती हैं। घोड़ेसे उतरकर वह बड़े भाई को प्रणाम करता है और संध्या होनेतक दोनों भाई ओरछेमें पहुँच जाते हैं। राजा के लौटनेका समाचार पाते ही सारे नगरमें आनंदोत्सव होने लगता है।

रातको कुलीना भी अपने हाथसे भोजन बनाकर पति और देवरको परोसती है। परंतु गलतीसे सोनेका थाल हरदौल के आगे और चाँदी का थाल राजा जुझारसिंह के सामने रखती है। यह देखकर जुझारसिंह तिलमिला उठता है और दो-चार कौर खाकर उठ जाता है। उसके उठनेके बाद कुलीना थाल देखती है तो उसकी गलती उसे मालूम होती है।

उस रात कुलीना जब जुझारसिंहके पास चली जाती है तो वह उसके पातिव्रत पर मिथ्या आरोप करता है। कुलीना देवरको अपने पुत्र समान मानती थी। वह जुझारसिंहको समझानेकी कोशिश करती है, लेकिन वह उसकी बातपर विश्वास नहीं करता। अंतमें वह कहती है क्या यह आपका अंतिम विचार है तब वह कहता है –

"यह मेरा अन्तिम विचार है। देखो, इस पानदानमें पानका बीड़ा रखा है। तुम्हारे सतीत्व की परीक्षा यही है कि तुम हरदौल को इसे अपने हाथों खिला दो। मेरे मन का भ्रम उसी समय निकलेगा जब इस घरसे हरदौल

की लाश निकलेगी।"[1]

कुलीना अपने हाथसे देवरकी हत्या करनेके लिए तैयार नहीं होती और अपने मन-ही-मन सोचती है -

"तुम्हारे पातिव्रत पर संदेह किया जा रहा है और तुम्हें इस संदेह को मिटाना होगा। यदि तुम्हारी जान जोखिममें होती, तो कुछ हर्ज न था। अपनी जान देकर हरदौल को बचा लेती,: पर इस समय तुम्हारे पातिव्रत पर आँच आ रही है। इसलिए तुम्हें यह पाप करना ही होगा, और पाप करनेके बाद हँसना और प्रसन्न रहना होगा।"[2]

आधी रातमें होनेवाली इन दोनोंकी बातें एक दासी सुनती है और राजा हरदौल को जाकर बता देती है। एक निर्दोष सती अबला के लिए हरदौल अपने प्राण देनेके लिए तैयार हो जाता है। दूसरे दिन वह अपने भाई के पास जाकर स्वयं विष का बीड़ा माँग लेता है और कुलीना के पातिव्रत पर कोई आँच नहीं आने देता।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने पातिव्रत धर्मको बनाये रखनेके लिए कुलीना का आंतरिक संघर्ष और देवर हरदौल का निर्दोष सतीको बचानेके लिए किये आत्मत्याग का यथार्थ चित्रण करनेका प्रयास किया है।

---

२. "पाप का अग्निकुंड" :-

कहानी की नायिका "राजनंदिनी" महाराज यशवंतसिंह की कन्या थी, जो रूपवती और गुणसंपन्न थी। उसकी शादी सेनाके उच्च पदाधिकारी "धर्मसिंह" से हुई थी, जो कर्मवीर और उदार था। वह अधिकतर जोधपुरमें ही रहता था।

---

१. प्रेमचन्द - राजा हरदौल, सं. १९७८, पृ. २२, ।

२. प्रेमचन्द - राजा हरदौल, पृ. २३, सं. १९७८।

राजनंदिनी का भाई "पृथ्विसिंह" रूप और गुणोंसे संपन्न कई भाषाओंका पंडित था। वह और धर्मसिंह दोनों घनिष्ठ मित्र थे। पृथ्विसिंह की पत्नी दुर्गाकुँवरी और राजनंदिनी दोनोंमें स्नेह था। दोनों संस्कृतसे प्रेम रखती थीं।

एक दिन दोनों बगीचेमें घूम रही थी। तब एक दासी आकर राजनंदिनी को कहती है, बाहर एक औरत खड़ी है जिसने एक पत्र दिया है। उस पत्रको पढ़कर राजनंदिनी उस औरतको बुलाती है। तो उसके सामने पचीस सालकी विक्रमनगर की रहनेवाली "ब्रजविलासिनी" नामकी संस्कृतसे प्रेम रखनेवाली युवती आती है। उस दिन से वह दोनों राजरानियोंके साथ रहकर हरदिन उन्हें रोचक कविताएँ पढ़ाकर सुनाने लगती हैं। कुछ ही दिनोंमें वे एक-दूसरी से हिल-मिल जाती है।

एक दिन उसे रोते देखकर दोनों उसके दु:खका कारण पूछती हैं तो वह एक नौजवान द्वारा उसके पिताके हत्याकी घटना बताते हुए उनके अंतिम शब्द सुनाती है, -

"यह मेरी तलवार लो। जबतक तुम यह तलवार उस राजपूत के कलेजेमें न भोंक दो, तबतक विलास न करना।"[1] और उस नौजवान से बदला लेनेके लिए घरसे निकलकर यहाँ तक पहुँचने की कथा सुनाती है। एक दिन राजनंदिनी उसे "बिहारी की सतसई" सुनानेके लिए कहती है तो ब्रजविलासिनी उसे निकालकर पहले पृष्ठपर लगी हुई तस्वीर देखतेही अपने पिताके हत्यारे को पहचानती है।

उधर पूरे सोलह महीनेके बाद अफगानिस्तान से धर्मसिंह और पृथ्विसिंह जोधपुर लौटते हैं। दोनोंके आनेका समाचार सुनकर ब्रजविलासिनी दोनोंके लिए अभिनंदन-पत्र बनाकर रखती है। दूसरे दिन वह पत्र पृथ्विसिंहको देकर धर्मसिंहको देने जाती है तो ब्रजविलासिनी को देखकर वह सहम जाता है,

---

१. प्रेमचन्द - पाप का अग्निकुंड, पृ. १३१, सं. १९७८

उसके चेहरेका रंग उड़ जाता है।

उसी रात पति को पलंगपर न देखकर राजनंदिनी ब्रजविलासिनीके कमरे की ओर चली जाती है। तो एक तरफ अपने पतिको हाथ जोड़े, घुटने टेके बैठे, तो दूसरी ओर ब्रजविलासिनी के हाथमें तेगा देखकर उसका संदेह दृढ़ हो जाता है। वह अपना पति ही ब्रजविलसिनीके पिता का हत्यारा है यह बात समझ जाती है।

दूसरे दिन पृथ्विसिंह और धर्मसिंह शिकार खेलनेके लिए जाते रहते हैं तब रास्तेमें धर्मसिंह पृथ्विसिंह के साथ ब्रजविलासिनी की चर्चा छेड़ते हुए कहता है, –

"मैने प्रतिज्ञा की है कि जिस आदमीने उसके बापको मारा है, उसे भी जहन्नुम में पहुँचा दूँ।"[१]

आगे वह कहता है यदि मैं किसी कारणवश यह काम न कर सका तो तुम मेरी प्रतिज्ञा पूरी कर दो। पृथ्विसिंह दुर्गाकुँवरीकी शपथ लेकर यह काम पूरा करनेकी प्रतिज्ञा करता है। तब धर्मसिंह घोड़ेसे उतारकर वह आदमी मैं ही हूँ ऐसा कहता है, तो पृथ्विसिंह अपनी प्रतिज्ञा निभानेके लिए तेगा निकालकर उसके सीनेमें चुभा देता है।

अपने पति की मृत्यु की खबर सुनकर राजनंदिनी सती जानेके लिए तैयार होती है, तब वहाँ पृथ्विसिंह आकर अपराध के लिए क्षमा माँगने लगता है तो राजनंदिनी उसे कहती है, – "तुमने एक नौजवान राजपूत की जान ली है, तुम भी जवानीमें मारे जाओगे।"[२]

सात सप्ताहके भीतर पृथ्विसिंह का दिल्लीमें कत्ल किया जाता है राजनंदिनीके लब्ज सच्च हो जाते हैं। दुर्गाकुँवरी भी पतिके साथ सती हो जाती है।

---

१. प्रेमचन्द – पाप का अग्निकुंड, पृ. १३५, सं. १९७८।
२. प्रेमचन्द – पाप का अग्निकुंड, पृ. १३८, सं. १९७८।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने "राजनंदिनी" के माध्यमसे सती के "वचन" को सत्यमें परिणित होते हुए दिखानेका प्रयास किया है।

४. "रानी सारंधा" :-

कहानी की नायिका "सारंधा" का भाई "अनिरुध्द सिंह" एक वीर राजपूत था। एक दिन उसे लड़ाईसे शस्त्रविरहित लौटते देखकर वह फटकारती है जिसके कारण वह फिर वापस जाकर मैदानमें जीतकर लौटता है।

कुछही दिनों बाद सारंधा का विवाह ओरछाके नरेश "चम्पतराय" से हो जाता है। परंतु चम्पतराय को कुछ घटनाओंके कारण देहलीके शहजादा "दारा शिकोह" का आश्रित होना पड़ता है। अत: वह अपने भाई को ओरछा का राज्य सौंपकर देहली चला जाता है। दारा शिकोह उसे "कालपी" की नौ लाख आमदनी की जागीर भेंट स्वरूप देता है। देहलीमें आकर चम्पतराय को लड़ाई-झगड़ोंसे निवृत्ति मिलती है और वह भोग-विलासमें मग्न रहने लगता है। जब सारंधाको इस बातका पता चलता है तो वह वहाँ खुद जाकर उसे आधीन जीवन व्यतित करनेके लिए धिक्कारते हुए कहती है, "ओरछे में मैं एक राजा की रानी थी। यहाँ मैं एक जागीरदार की चेरी हूँ। ओरछे में वह थी जो अवधमें कौशल्या थी, यहाँ मैं बादशाह के एक सेवक की स्त्री हूँ। जिस बादशाह के सामने आज आप आदरसे सिर झुकाते हैं, वह कल आपके नामसे काँपता था। रानी से चेरी होकर भी प्रसन्न चित्त रहना मेरे वश में नहीं है। आपने यह पद और ये विलास की सामग्रियाँ बड़े महँगे दामों मोल ली है।"[१]

उसकी इन बातोंको सुनकर चम्पतराय की आँखोंका परदा हट जाता है और वह फिर ओरछा आता है।

---

१. प्रेमचन्द - रानी सारंधा, पृ. ४९, सं. १९७८.

कई महिनोंके बाद शाहजादा बीमार पड़ता है और चम्पतराय को "शाहजादा मुराद" और "मुहीउद्दीन" का लड़ाईमें सामना करनेके लिए आमंत्रित करता है। उस युध्दमें चम्पतरायके सात सौ बुंदेले मारे जाते हैं और विजय की कोई आशा नहीं दिखाई देती इतनेमें रानी सारंधा अपनी सेनासहित आकर उसकी सहायता करती है। युध्दकी समाप्तिके बाद चम्पतराय को बादशाही सेनाके बागल सेनापति "वली बहादुर खाँ" का घोड़ा दिखाई देता है। चम्पतराय "एराकी" जाति का वह सुंदर घोड़ा देखकर योध्दाओंको उस घोडेको अपने पास लानेका हुक्म देता है। परंन्तु उस घोडेके पास जानेका साहस किसीका नहीं होता, तो रानी सारंधा जाकर उस घोड़ेको ले आती है और चम्पतराय को देती है।

युध्दमें चम्पतराय की जीत होती है। उसके इस कामके लिए औरंगजेब उसे बारह हजारी मन्सब प्रदान करता है और वली खाँ अपनी वाक्यचतुरतासे बादशहा आलमगीर का विश्वासपात्र बन जाता है। वह अपने घोड़ेको फिरसे पा लेनेकी ताकमें रहता है।

एक दिन सारंधा का पुत्र "छत्रसाल" घोडेपर सवार होकर सैर करने निकलता है। यह देख वली खाँ अपने सेवकोंद्वारा छत्रसाल से अपना घोड़ा छीन लेता है। छत्रसाल घर लौटकर सारंधासे सारा समाचार सुनाता है तब उसका चेहरा लालमाता है, वह अपने पुत्रको कहती है, – "मुझे इसका शोक नहीं कि घोड़ा हाथ से गया, शोक इसका है कि तू उसे खोकर जीता क्यों लौटा ? क्या तेरे शरीर में बुंदेलों का रक्त नहीं है ? घोड़ा न मिलता, न सही, किन्तु तुझे दिखा देना चाहिए था कि एक बुंदेला बालक से उसका घोड़ा छीन लेना हँसी नहीं है।"[१]

और तब अपने पच्चीस योध्दाओंको लेकर वली बहादुर खाँ के निवासस्थान पर जाती है। परंतु खाँ साहब दरबार गये थे यह जानकर वह

---

१. प्रेमचन्द – रानी सारंधा, पृ. ५३, सं. १९७८।

तुरंत दरबारमें जा पहुँचती है। उसे देखकर सारा अधिकारी वर्ग तथा बादशहा आलमगीर भी वहाँ आ जाता है तो सारंधा उच्च स्वरमें वली खाँ से कहती है, – "खाँ साहब, बडी लज्जाकी बात है, आपने वही वीरता, जो चम्बल के तटपर दिखानी चाहिए थी, आज एक अबोध बालक के सम्मुख दिखाई है। क्या यह उचित था कि आप उससे घोड़ा छीन लेते ?"[१]

उसने यह घोड़ा वली खाँ से रणभूमिमें पाया था इसलिए घोड़ेपर अपना अधिकार बताती है। तो वली खाँ और आलमगीर उसे घोड़ेका मूल्य चुका देनेके लिए कहते हैं तब सारंधा घोड़ेके लिए अपनी विस्तृत जागीर और राजसम्मान का त्याग कर देती है और फिर चम्पतराय को लेकर ओरछे के किलेमें आ जाती है।

कुछ दिनों बाद चम्पतराय का गर्व चूर करनेके लिए बादशहा आलमगीर सेना भेज देता है, लेकिन तीन सालतक चम्पतराय उसके हाथ नहीं लगता। यह देखकर खुद आलमगीर ओरछेको घेर लेता है।

एक दिन अंधेरी रातमें बीमार चम्पतरायं को पालखीमें बिठाकर सारंधा किलेके गुप्त मार्ग से निकल जाती है। ओरछा दस कोस पीछे रह जाता है। जब वह पीछे की ओर देखती है तो बादशही सेना पीछा करती हुई दिखाई देती है। चम्पतराय उसे उस सेनाके हाथों पड़नेके बजाय अपनी तलवार छातीमें चुभा देनेके लिए कहता है और एकही क्षणमें सारंधा अपने पति का अंत कर देती है और स्वयं भी तलवार अपने हृदयमें चुभा लेती है।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने भारतीय नारी सारंधा अपनी आनके लिए अपना पुत्र, पति तथा अपने प्राणोंका त्याग किसप्रकार कर देती है इसका चित्रण करते हुए रानी सारंधा को आत्मनिर्भर, स्वाभिमानी और शूर नारी के रूपमें चित्रित किया है।

---

१. प्रेमचन्द – रानी सारंधा, पृ. ५४, सं. १९७८।

९. "निर्वासन"

कहानीकी नायिका "मर्यादा" और नायक "परशुराम" दोनों पति-पत्नि हैं। "वासुदेव" इनका पुत्र है।

एक दिन "मर्यादा" अपने पति के साथ मेला देखने जाती है और मेले में खो जाती है। तब वह एक किनारे बैठकर रोने लगती है। इतनेमें वहाँ सेवासमिती का सेवक आकर उसके घरवालोंके बारेमें पूछताछ कर उसे कार्यालयमें ले जाता है। वहां मर्यादा की तरह खोई हुई अन्य स्त्रियाँ भी उसे दिखाई देती हैं। वह बार-बार सेवासमिती के अध्यक्ष को घर पहुँचाने के लिए कहती है। परंतु अध्यक्ष उसे कहता है, -

"जब तक मेला खत्म न हो जाय और सब खोई हुई स्त्रियाँ इकट्ठा न हो जायँ, मैं भेजनेका प्रबन्ध नहीं कर सकता मेरे पास न इतने आदमी हैं, न इतना धन।"[१]

दूसरे दिन सेवासमिती का सेवक सभी स्त्रियों को वहाँ के मुख्य-मुख्य पवित्र स्थानों का दर्शन करवाता है और तिसरे दिन मेला खत्म हो जानेपर वह उनको लेकर रेल स्टेशन पर आता है। जब वह टिकट लेने जाने लगता है तब एक अनजान आदमी उनके पास आकर मर्यादा के पति का हू-ब-हू वर्णन सेवकसे करता है। अपने पति का हुलिया ठीक-ठीक सुनकर "मर्यादा" को उस आदमीपर विश्वास हो जानेपर सेवक उस आदमीको कुछ प्रश्न पूछता है और उसके साथ मर्यादा को भेज देता है। वह आदमी उसे तांगेमें बिठाकर एक तंग गलीमें एक छोटेसे मकानके अंदर ले जाता है और उसे बताता हैं, तुम यहीं बैठो तुम्हारे पति यहीं आएँगे। कुछ ही देरमें उसे किसी गलत आदमीके हाथों आ जानेकी कल्पना आती है और वह रोने लगती है। इतनेमें वहाँ एक बुढिया आती है और उसे भाँति-भाँति के प्रलोभन देने लगती है। परंतु उसके प्रलोभनके जालमें न फँसकर मर्यादा अपने सतीत्व की रक्षा करती हुई उस दुराचारी

---

१. प्रेमचन्द - निर्वासन, पृ. ४८, सं. १९८०।

आदमीके हाथसे निकलकर हार लौटती है। जब वह घर लौटती है तो उसे उसका पति अपनाने के लिए तैयार नहीं होता। वह उसे कहता है, –

"जिस स्त्री पर दूसरी निगाहें पड़ चुकीं, जो एक सप्ताह तक न-जाने कहाँ और किस दशामें रही, उसे अंगीकार करना मेरे लिए असम्भव है।"[१]

तब वह अपने पुत्रको देखना चाहती है, परंतु पति पुत्रको स्पर्श करनेके लिए भी मना करते हुए कहता है, –

"तुम्हारा किसी अन्य पुरुषके साथ क्षण-भर भी एकान्तमें रहना तुम्हारे पतिव्रत को नष्ट करनेके लिए बहुत है। यह विचित्र बन्धन है, रहे तो जन्म-जन्मान्तर तक रहे, टूटे तो क्षणभर में टूट जाय। तुम्हीं बताओ, किसी मुसलमानने जबरदस्ती मुझे अपना उच्छिष्ट भोजन खिला दिया होता, तो तुम मुझे स्वीकार करती?"[२]

इन बातोंको सुनकर वह पतिसे कहती है, – "पर तुम्हें घर से तो न निकाल सकती थी। मुझे इसलिए न दुतकार रहे हो कि तुम घर के स्वामी हो और समझते हो कि मैं इसका पालन करता हूँ।"[३]

और अपने पुत्रको देखे बिना ही मर्यादा घर छोड़कर चली जाती है।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने मर्यादा को समस्त प्रलोभनों को अपने सतीत्व के सामने तुच्छ समझकर अस्वीकार करते हुए चित्रित करनेका प्रयास किया है।

---

१. प्रेमचन्द – निर्वासन, पृ. ५२। सं. १९८०।
२. प्रेमचन्द – निर्वासन, पृ. ५२। सं. १९८०।
३. प्रेमचन्द – निर्वासन, पृ. ५३। सं. १९८०।

ग्रामीण जीवनमें धर्म का पाखंडी रूप

अंधविश्वास और जातिभेद

भारतीय ग्रामीण जीवनपर "धर्म"का गहरा प्रभाव है। हरएक ग्रामीण व्यक्ति को विश्वास होता है कि धर्म के सम्बल ही मानव जीवन का अस्तित्व है। धर्महीं उनके जीवनका मार्ग प्रशस्त करता है तथा अलौकिक शक्ति के प्रति विश्वास जगाता है। उनके जीवनका कोई अंग ऐसा नहीं होता जो धर्मके रंग में न रंगा हो। उनका धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक जीवन सभीकुछ धार्मिक भावनाओंसे प्रभावित रहता है। उनमें ईश्वरके प्रति अटूट आस्था होती है।

प्रेमचन्दजीके समय ग्रामीण समाजमें धर्म का जो स्वरूप दिखाई देता है उसमें बाह्याडंबरों, अन्धविश्वासों तथा पाखण्डों की ही प्रधानता दिखाई देती है। गांवमें मनुष्यके जीवनकी प्रत्येक गतिविधि धर्मसे प्रभावित होती थी और इस धर्मके प्रमुख व्यवस्थापक वहाँके धर्मके ठेकेदार पंडित - पुरोहित, पंच-सरपंच आदि थे। इनके द्वारा बनाये गये नियम प्रत्येक ग्रामवासी को पालन करने पड़ते थे। धर्म के नामपर ये स्वार्थी लोग लोगोंको लूटते रहते थे। इसीकारण जातिभेद की भावनाको इतना बढ़ावा मिला था, कि समाजसे मानवता का लोप ही हो गया था।

मनुष्य के मृत्यु के पश्चात् उसके प्रति समस्त धार्मिक कृत्योंको पूरा करना आवश्यक समझा जाता है। ग्रामीण समाजमें व्यक्ति की आर्थिक स्थिति कितनी भी दुष्कर क्यों न हो, मृतक व्यक्तिसे सम्बन्धित विभिन्न कार्योंको पूरा करना ही पड़ता है। वहाँ के धर्मके ठेकेदार मृतकका सम्बन्ध धर्म से जोड़कर अपने स्वार्थोंकी पूर्ति कर लेते हैं।

ग्रामीण अज्ञानी लोग ब्राम्हणोंके ढोंगी स्वरूप के कारण उनके चंगुलमें फँस जाते हैं। ऐसे ढोंगी ब्राम्हण ग्रामवासियोंको "ब्रह्म" के समान दृष्टिगत होते हैं।

परंतु धर्मके ठेकेदार वास्तविक रूपमें ग्रामीण लोगोंके रक्षक न होकर भक्षक ही बने रहते थे। साथही ग्रामवासियों का तन्त्र-मंत्र, झाड-फूँक, मूठ-टोना आदियों दृढ़ विश्वास होता था।

प्रेमचन्दकी निम्नलिखित कहानियोंमें हमें धर्म के हास्यास्पद और पाखंडी रूप तथा जातिभेद और समस्त अंधविश्वासोंका चित्रण मिलता है।

१. "सद्‌गति" :-

कहानीका नायक "दुखी चमार" अपनी कन्या के विवाह का सगुण पूछनेके लिए "पंडित घासीराम" को अपने घर बुलानेके लिए जाता है। जाते समय पत्नी "झुरिया" से पंडितको सीधा देनेके लिए महुएके पत्तोंका पत्तल तैयार रखनेके लिए कहता है। पंडितजीको सीधा देनेके बारेमें वह उसे बताता है, -

"कहीं ऐसा गजब न करना, नहीं तो सीधा भी जाय और थाली भी फूटे। बाबा थाली उठाकर पटक देंगे। उनको बड़ी जल्दी क्रोध चढ़ आता है। क्रोध में पंडिताइन तक को छोड़ते नहीं, लड़के को ऐसा पीटा कि आजतक टूटा हाथ लिये फिरता है। पत्तल में सीधा भी देना, हाँ! मुदा तू छूना मत। झूरी गोंड़ की लड़की को लेकर साहू की दुकान से सब चीजें ले आना। सीधा भरपूर हो। सेर भर आटा, आधसेर चावल, पाव भर दाल, आध पाव घी नोन, हल्दी और पत्तल में एक किनारे चार आने पैसे रख देना। गोंड़ की लड़की न मिले तो भुर्जिन के हाथ-पैर जोड़कर ले आना। तू कुछ मत छूना, नहीं गजब हो जायगा।"[1]

वह घास का एक बड़ा गट्ठा पंडितजीको नजराना देनेके लिए उन्हें बुलाने जाता है। उसे देखतेही पंडितजी उसके आनेका कारण पूछते हैं, तब वह बेटीके सगुण के बारेमें कहता है। तब पंडितजी उसे सांझ के समय घरमें तबतक व्हार की

---

१. प्रेमचन्द - सद्‌गति - पृ. १८-१९, - सं. १९८०.

सफाई बैठक को लिपना, लकड़ी चीरना और भूसा ढ़ोना आदि काम बता देते हैं। उनकी आज्ञानुसार पहले दुखी दरवाजेपर झाड़ू लगाता है, गोबर से बैठक लीपता है तबतक बारह बज जाते हैं। फिर वह लकड़ी चीरने का काम प्रारंभ कर देता है, परंतु उसे आदत न होनेके कारण कुल्हाडी उचट जाती है और आँखोंतले अँधेरा छा जाता है तब वह गाँवमें जाकर एक गौंड़ से चिलम-तमाखू ले आता है और फिर वापस आकर पंडितजीके घर आग माँगता है। शुरूमें पंडितजी की पत्नी उसे आग देनेके लिए तैयार तो नहीं होती, परंतु बादमें आग ले आती है और पाँच हाथ की दूरी से उसकी तरफ फेंकती है। तब एक बड़ी चिनगारी दुखीके सिरपर पड़ जाती है। दुखी चिलम सुलगाता है, पीता है और फिर लकड़ीचीरने लगता है, परंतु फिर सिर पकड़कर बैठ जाता है। इतनेमें वहाँ गौंड आता है और उसे लकड़ीचीरने की गाँठ न पटेगी ऐसा कहते हुए खुद लकड़ी चीरने लगता है। परंतु वह भी उसमें कामयाब नहीं होता। दुखी दूसरे दिन आकर लकड़ी चीरनेकी सोचता है और भूसा ढ़ोने का काम करने लगता है। भूसा ढ़ोनेके बाद थकावट के कारण वह वहीं सो जाता है। पंडित उसे सोते हुए देखकर उठाते हैं और फिर लकड़ी चीरनेके लिए कहते हैं। बेचारा दुखी आधे घण्टे तक कुल्हाड़ चलाता रहता है। लकड़ी बीच से फट जाती है लेकिन दुखी वहीं गिर पड़ता है। यह देखकर पंडितजी उसे उठाने लगते हैं, परंतु दुखी हमेशा के लिए वहीं सो जाता है।

सारे गाँवमें दुखी की मृत्यु की खबर फैल जाती है। गाँवमें एक गौंड़ का घर छोड़कर पूरी बस्ती ब्राम्हणोंकी थी। पंडितजीके घरके सामने से कुएँ का रास्ता जाता था, परंतु दुखी की लाश वहाँ होनेके कारण लोगोंने पानी भरनेके लिए वहाँसे जाना बन्द कर दिया था। उधर गौंड़ भी दुखी के गाँवमें जाकर सब चमारों को खबर सुनाता है और मुर्दा उठानेके लिए मना कर देता है। अतः लाश को उठानेके लिए कोई तैयार नहीं होता। दुखीकी लाश को न ही चमार उठाते हैं और न ही ब्राम्हण। तब दूसरे दिन पंडितजी गुँह अँधेरे रस्सी का फन्दा बनाकर गुरदे के पैरमें डालते हैं और खींचकर दुखी की लाश को घसीटते हुए गाँवके बाहर फेंक देते हैं। और कुछही देरमें उस लाशको गीदड़, कुत्ते और कौए नोचने लगते हैं।

निष्कर्ष : -

इसमें कहानीकारने " पंडित घासीराम" के माध्यमसे ग्रामीण समाजमें व्याप्त ढोंगी ब्राम्हण को चित्रित करने का प्रयास किया है। साथही ढोंगी ब्राम्हण गरीब अछूत जाति के लोगोंपर किसतरह अत्याचार करते थे इसका भी चित्रण " दुखी चमार " के द्वारा किया है।

२] " मंदिर " : =

इस कहानीकी नायिका "सुखिया" चमारिन, जिसके पतिकी सालभर पहले मौत हो चुकी है। उसके दो बेटे भी गंगाने अपनी गोदमें लिये थे। उसका एकही बच्चा "जियावन" एकमात्र सहारा था, वह भी तीन दिन से बीमार था।

वह उसे एक क्षणभर के लिए भी आँखोंसे ओझल नहीं होने देती थी। घास बेचने जाती तो भी उसे साथ लेकर जाती थी। उसके बेटेकी बीमारी देखकर गाँववाली सभी औरतें उसे किसीकी नजर लग गयी होगी ऐसा उसे कहती हैं। तो वह उसके लिए क्या करे उसके बारेमें रातको सोचती रहती है। सोचते-सोचते उसे नींद आ जाती है और नींदमें वह अपने पति को देखती है, तो वह उसे कहता है, —

" रो मत, सुखिया! तेरा बालक अच्छा हो जाएगा। कल ठाकुरजी की पूजा कर दे, वही तेरे सहायक होंगे। "[१]

जब उसकी आँखे खुल जाती है, तो वह भगवान से कहती है, अगर मेरा बच्चा अच्छा हो जाय तो तेरी पूजा करूँगी और उसीसमय उसके बच्चे की आँखे खुल जाती है। उस दिन बच्चेकी तबीयत अच्छी रहती है। अत: सुखिया हाथों पैसे आनेपर भगवान की पूजा करनेके बारेमें सोचही रही थी। परंतु संध्या समय बच्चे की तबीयत फिर बिगड़ जाती है। बच्चे को सुलाकर वह पूजा का सामान तैयार करने लगती है लेकिन पैसे हाथमें न होनेके कारण वह भगवानके मिष्ठान्नके लिए अपने हाथके चाँदी के कड़े उतारकर बनियेके दुकानपर गिरवी रखकर पैसे लेकर आती है। पूजा का पूरा

---

१. प्रेमचन्द - मंदिर - पृ. ६, सं. १९८७.

सामान तैयार करके वह बच्चेको लेकर मंदिर की ओर चली जाती है। मंदिरका पुजारी उसे मंदिरमें प्रवेश देनेके लिए तैयार नहीं होता। तो वह अपने बच्चे की बीमारी की बात कहती है और उसे एक रुपया देकर एक क्षणभरके लिए क्यों न हो भगवान का दर्शन करनेकी इच्छा प्रगट करती है। परंतु पुजारी उसे मंदिरमें प्रवेश करने नहीं देता और एक रुपया लेकर एक तावीज बच्चेके गलेमें बांधनेके लिए देता है।

सुखिया घर पहुँचकर बच्चेके गलेमें तावीज तो बाँध देती हैं परंतु उसका ज्वर नहीं हटता। अत: रात के तीन बजे वह बच्चेको लेकर फिर मंदिरमें आती है। परंतु मंदिरके द्वारपर ताला देखकर, एक ईंट लेकर ताला तोड़ देती है। वह मंदिरमें प्रवेश करना चाहती ही थी, इतनेमें पुजारी चोर-चोर का शोर मचाते है और गांववाले इकट्ठा हो जाते हैं। तब सुखिया बरामदे से निकलकर चबूतरे पर आ जाती है। उसे मंदिरके अंदर देखकर कई आदमी लातोंसे मारने लगते हैं। तब वह अपने बच्चेको एक हाथसे पकड़कर दूसरे हाथ से रक्षा करती है। यकायक एक बलिष्ठ ठाकुर उसे जोर से धक्का देता है और उसका बच्चा हाथसे छूटकर जमीन पर गिर जाता है, न ही वह रोता है, न कुछ बोलता है। वह बच्चेको उपर उठानेके लिए स्पर्श करती है तो उसका शरीर ठंड़ा पड़ा हुआ देखकर उसके मुँहसे चीख निकलती है और वह क्रोधसे उन्मत्त होकर लोगोंसे कहती है,

"पापियों, मेरे बच्चे के प्राण लेकर अब दूर क्यों खड़े हो ? मुझे भी क्यों नहीं उसी के साथ मार डालते ? मेरे छू लेनेसे ठाकुरजी को छूत लग गई पारस को छूकर लोहा सोना हो जाता है, पारस लोहा नहीं हो सकता। मेरे छूने से ठाकुरजी अपवित्र हो जायेंगे। मुझे बनाया, तो छूत नहीं लगी ? लो, अब कभी ठाकुरजी को छूने नहीं आऊँगी। ताले में बंद रखो, पहरा बैठा दो। हाय, तुम्हें दया छू भी नहीं गई। तुम इतने कठोर हो। बाल-बच्चे वाले होकर भी तुम्हें एक अभागिनी माता पर दया न आयी। तिसपर धरमके ठेकेदार बनते हो। तुम सबके सब हत्यारे हो, निपट हत्यारे हो। डरो मत, मैं थाना पुलिस नहीं जाऊँगी, मेरा न्याय भगवान् करेंगे, अब उन्हीं के दरबार में फरियाद करूँगी।"[1]

1] प्रेमचन्द - मंदिर, पृ. ११-१२, सं. १९८७ ।

उसकी बातें सुनकर लोग पाषाण मूर्तियोंकी भाँति खड़े रह जाते हैं और सुखिया वहीं गिर पड़ती है । अपने बच्चे के लिए वह अपना प्राण त्याग देती है।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने "सुखिया" चमारिन के माध्यमसे धर्म के ठेकेदारोंके ढोंगी स्वरूप पर कटु प्रहार करते हुए जातिभेद का यथार्थ चित्रण किया है।

३. "दुध का दाम"

इस कहानी के एक पात्र गांवके जमींदार बाबू "महेशनाथ" को तीन कन्याओंके बाद चौथा लड़का होता है। उनकी पत्नी अपने बच्चे को दूध देनेमें असमर्थ होती है, तो "भूँगी दाई" को बच्चेको दूध पिलानेके लिए बुलाया जाता है। उसके अनुसार वह जमींदार के बच्चे को दूध पिलाती रहती है। जिसके कारण वह खुदके तीन महीनेके बच्चे को दूध पिला नहीं सकती और उसका बच्चा उपरका दूध हजम न करने के कारण दुबला बन जाता है।

वह एक सालतक जमींदार के बच्चे को दूध पिलाती रहती है जिसके कारण गांवके पंडित मोटेराम शास्त्री जमींदार को प्रायश्चित करनेके लिए कहते हैं। तो जमींदार पंडितजीका प्रस्ताव हँसी में उड़ाते हुए कहते हैं , -

"प्रायश्चित की खूब कही शास्त्रीजी, कल तक उसी भंगिन का खून पीकर पला, अब उसमें दूध घुस गई। वाह रे आपका धर्म।"[१]

उनकी फटकार सुनकर पंडितजी कहते हैं, - "यह सत्य है, वह कल तक भंगिन का रक्त पीकर पला। मांस खाकर पला, यह भी सत्य है, लेकिन कल की बात

---

१. प्रेमचन्द - दूध का दाम, पृ. १७४, सं. १९८७ ।

कल थी, आज की बात आज। जगन्नाथपुरी में तो छूत-अछूत सब एक पंगत में खाते हैं, पर यहाँ तो नहीं खा सकते। बीमारी में तो हम भी कपड़े पहनें लेते हैं, खिचड़ी तक खा लेते हैं, बाबूजी, लेकिन अच्छे हो जानेपर तो नेम का पालन करना ही पड़ता है आपधर्म की बात न्यारी है।"[१]

तब जमींदार उसे कहते हैं, -

"तो इसका यह अर्थ है कि धर्म बदलता रहता है - कभी कुछ, कभी कुछ ?"[२]

यह सुनकर पंडितजी कहते हैं, -

"और क्या। राजा का धर्म अलग, प्रजा का धर्म अलग, अमीर का धर्म अलग, गरीब का अलग। राजे-महाराजे जो चाहें खायँ, जिसके साथ चाहें खायँ, जिसके साथ चाहें शादी-ब्याह करें, उनके लिए कोई बन्धन नहीं। समर्थ पुरुष हैं। बन्धन तो मध्यवालों के लिए है।"[३]

यह सुनकर जमींदार प्रायश्चित तो करते नहीं लेकिन उनके कहनेपर भूँगी दाई को उनके घर से दान-दक्षिणा देकर विदा किया जाता है।

उस साल गाँवमें प्लेग की बीमारी फैल जाती है, जिसमें भूँगी का पति मर जाता है। वह अकेली अपने बच्चेको लेकर उदरनिर्वाह करने लगती है। एक दिन जमींदार के घरका परनाला साफ करते हुए उसे विषैला साँप डस जाता है और उसकी मृत्यु हो जाती है। उसका बच्चा "मंगल" अनाथ हो जाता है। जमींदार के घरका जूठन खाकर वह अपने कुत्तेके साथ उनके घरके सामने रहने लगता है। गाँवके धर्मात्मा लोगों को जमींदार के द्वारपर अछूत मंगलका पड़ा रहना पसंद नहीं था। यह बात उन्हें धर्म के विरुध्द जान पड़ती थी।

एक दिन मंगल खेल रहे लड़कोंको दूर खड़ा होकर देखने लगता है, तो जमींदार का लड़का, सुरेश, उसे खेलमें शामिल करवा लेता है और उसे घोड़ा बननेके

---

१. प्रेमचन्द - दूध का दाम, पृ. १७४, सं. १९८७।
२. प्रेमचन्द - दूध का दाम, पृ. १७४, सं. १९८७।
३. प्रेमचन्द - दूध का दाम, पृ. १७४, सं. १९८७।

लिए कहता है। तो मंगल उसे पहले मैं सवारी करूँगा और बादमें घोड़ा बनूँगा कहता है। उसका यह उत्तर सुनकर सुरेश उसे कहता है, -

"तुझे कौन अपनी पीठपर बिठाएगा, सोच ! आखिर तू भंगी है कि नहीं ?"[१]

तब मंगल उत्तर देता है, -

"मैं कब कहता हूँ कि, मैं भंगी नहीं हूँ, लेकिन तुम्हें मेरी ही माँ ने दूध पिलाकर पाला है।"[२]

यह सुनकर सुरेश उसको पकड़कर जबरदस्ती घोड़ा बनवाकर उसपर सवार होता है। मंगल कुछ दूरतक चलनेके बाद सुरेश को पीठपर से गिरा देता है और सुरेश रोने लगता है। उसके रोनेका कारण पूछनेपर वह माँ से मंगलने छूने की बात कहता है और उसकी माँ मंगल को वहांसे निकल जानेका हुक्म देती है।

मंगल चुपचाप अपने कुत्ते टामी के साथ खंडहरमें चला जाता है और रातको भूखके कारण फिर जमींदार के द्वारपर लौट आता है। उसे वहां उनका जूठन खाने को मिलता है, तो वह टामीसे बातें करते हुए कहता है, -

"लोग कहते हैं, दूध का दाम कोई नहीं चुका सकता और मुझे दुध का यह दाम मिल रहा है।"[३]

निष्कर्ष :-

इस कहानी में कहानीकारने "भंगी दाई" के बच्चेको दूध के दामके बदले किसतरह जमींदार से ताड़ना मिलती है इसका चित्रण प्रस्तुत करते हुए जातिभेद की उँची दीवार को स्पष्ट किया है।

---

१. प्रेमचन्द, दूध का दाम, पृ. १७६ । सं. १९८७ ।
२. प्रेमचन्द, दुध का दाम, पृ. १७७ । सं. १९८७ ।
३. प्रेमचन्द, दुध का दाम, पृ. १८० , सं. १९८७ ।

५. "ठाकुर का कुआँ" :-

कहानी की नायिका "गंगी" का पति "जोखू" बहुतही बीमार पड़ जाता है। गांवमें तीन कुँए थे। एक ठाकुरका, दूसरा साहूका और तीसरा अछूतों का। गंगी हर शाम पानी भरने जाती थी। अछूतोंके कुँएमें कोई जानवर मर जानेसे पानी को बदबू आ रही थी। बदबूदार पानी पीनेसे बीमारी बढ़ जायेगी इसलिए वह अपने पतिको पीने के लिए नहीं देना चाहती थी। उसे यह मालूम न था कि पानी उबाल देनेसे बदबू नष्ट होती है।

अछूतोंका कुँआ गांवसे दूर था। अत: बार-बार पानी लाने जाना मुश्किल था। इसलिए वह हर शाम पानी भर लिया करती थी। कल वह पानी लायी थी उसमें बिल्कुल बदबू नहीं थी। मगर दूसरे दिन उस पानी को बदबू आ रही थी। वह मन-ही-मन सोचती है, - "ठाकूर के कुएँ पर कौन चढ़ने देगा। दूर से लोग डाँट बताएँगे। साहू का कुआँ गाँव के उस सिरे पर है, परन्तु वहाँ भी कौन पानी भरने देगा ? चौथा कुआँ गाँवमें है नहीं।"[१]

अत: वह अपने पतिके लिए शुध्द पानी लानेके हेतू रातके समय ठाकुरके कुँएपर जाना चाहती है तो उसका पति उसे कहता है -

"हाथ-पाँव तुड़वा आयेगी और कुछ न होगा। बैठ चुपकेसे ब्राह्मन देवता आशीर्वाद देंगे, ठाकुर लाठी मारेंगे, साहूजी एक के पाँच लेंगे। गरीबों का दर्द कौन समझता है। हम तो मर भी जाते हैं, तो कोई दुआर पर झाँकने नहीं आता, कंधा देना तो बड़ी बात है। ऐसे लोग कुएँ से पानी भरने देंगे।"[२]

पति की बातें सुनकर भी वह ठाकुरके कुँएपर जाती है। तो उसे ठाकुरके घरके सामने कुछ लोग बैठे हुए दिखाते देते हैं जो ठाकुरके ही गुण गा रहे थे। उनकी बातें सुनकर वह मन-ही-मन सोचती है, -

---

१. प्रेमचन्द, ठाकुर का कुआँ, पृ. १४०, सं. १९८८।
२. प्रेमचन्द, ठाकुर का कुआँ, पृ. १४०, सं. १९८८।

"हम क्यों नीच हैं और ये लोग क्यों ऊँच हैं ? इसलिए कि ये लोग गलेमें तागा डाल लेते हैं ? यहाँ तो जितने हैं, एक-से-एक छँटे हैं ? चोरी ये करें, जाल-फरेब ये करें, झूठे मुकद्मे ये करें। अभी इस ठाकुर ने तो उस दिन बेचारे गड़रिये की एक भेड़ चुरा ली थी और बाद को मार कर खा गया। इन्हीं पण्डितजी के घरमें तो बारहो मास जुआ होता है। यही साहुजी तो घी में तेल मिलाकर बेचते हैं। काम करालेते हैं, मजूरी देने नानी मरती है। किस बातमें हमसे ऊँचे। हाँ, मुँह में हमसे ऊँचे है। हम गली-गली चिल्लाते नहीं कि हम ऊँचे हैं, हम ऊँचे।" [१]

वह इसतरह सोचही रही थी इतनेमें दो औरतें कुँओंकी तरफ पानी भरनेके लिए आती हैं। तब वह एक पेड़के पीछे छिप जाती है। औरतें जानेपर गंगी धीरज करके कुँओंके पास आती है और घड़ेको पास लगाकर कुँओंमें घड़ा छोड़कर पानी भर लेती है और पूरी ताकदसे घड़ेको उपर खींचती है घड़ा उसके हाथतक पहुँचही रहा था इतनेमें ठाकुरके दरवाजे की आहट पाकर उसके हाथसे रस्सी छूट जाती है और घड़ामसे घड़ा गिरता है और गंगी घर की तरफ भागती है। जब वह घर आकर देखती है तो प्याससे तड़पता जोखू वही बदबूदार पानी नाक दबाकर पी रहा था।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने अछूत लोगोंको पानीके एक बूँदके लिए उच्चवर्गीय लोग किसतरह तरसाते थे इसका सही चित्रण प्रस्तुत करनेका प्रयास किया है।

५ "ब्रह्म का स्वाँग" :-

एक ब्राम्हण कन्या "वृन्दा" इस कहानी की नायिका है। उसके घरमें पति से, मिलने नित्य भिन्न-भिन्न जाति के लोग आते रहते थे। पंति उन लोगोंके साथ बैठकर भोजन भी करते थे और उन लोगोंके घर भी भोजनके लिए जाते थे।

---

१. प्रेमचन्द, ठाकुरका कुआँ, पृ. १४१, सं. १९८८।

एक दिन घरमें सहभोज का प्रस्ताव रखा जाता है। तब केवल चार ब्राम्हणोंको छोड़कर शेष अन्य जाति के लोग शामिल होते हैं और एकसाथ बैठकर खाना खाते हैं। ये सब देखकर वृन्दा पति से घृणा करते हुए पूछती है, -

"बिना एक साथ भोजन किये परस्पर प्रेम उत्पन्न नहीं हो सकता?"[१]

तो उसका पति कहता है, -

"यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। किंतु सोचो तो यह कितना घोर अन्याय है कि हम सब एक ही पिता की सन्तान होते हुए एक दूसरे से घृणा करें, ऊँच-नीच की व्यवस्था में मग्न रहें। यह सारा जगत उसी परमपिता का विराट रूप है। प्रत्येक जीवमें उसी परमात्मा की ज्योति आलोकित हो रही है। केवल इसी भौतिक परदे ने हमें एक दूसरे से पृथक कर दिया है।"[२]

पति की बातें सुनकर वृन्दा की आँखोंका परदा हट जाता है। एक दिन धोबिनके सिरमें दर्द होता देखकर वृद्ध उसके सिरमें घंटेभर तेल मलती है। महरी को सर्दीसे काँपती देखकर अपनी ऊनी चादर उसपर ओढ़ देती है और बर्तन धोनेमें भी मदद करती है। ननद की बिदाई के समय बिरादरी की महिलाओंको निमंत्रित किया जाता है। उनके साथ नीच जाति की महिलाएँ भी आती हैं, तो वृन्दा उन्हें कालिन पर बिठाती है। यह देखकर बिरादरी की सभी महिलाएँ एक-एक करके चली जाती हैं। जब उसके पति को यह बात मालूम होती है तो वह उसे कहता है, -

"यह तुम्हें क्या सूझी है, क्या हमारे मुँहमें कालिख लगवाना चाहती हो? तुम्हें ईश्वर ने इतनी भी बुध्दि नहीं दी कि किसके साथ बैठना चाहिए। भले घर की महिलाओं के साथ नीच स्त्रियों को बिठा दिया। वे अपने मनमें क्या कहती होंगी। तुमने मुझे मुंह दिखाने लायक नहीं रखा।"[३]

दूसरे दिन प्रातःकाल वह घरके सामने पचासो कंगाल मनुष्योंको रातके मेहमानों के जूठे पत्तल चाटते देखकर महरी को बुलाकर मेहमानों के लिए रखी हुई सारी मिठाईयाँ उन कंगालोंको देती है, यह देखकर उसका पति उसे कहता है, -

---

१. प्रेमचन्द, ब्रहम का स्वाँग, पृ. ११५, सं. १९८७.
२. प्रेमचन्द, ब्रहम का स्वाँग, पृ. ११५, सं. १९८७.
३. प्रेमचन्द, ब्रहम का स्वाँग, पृ. ११८, सं. १९८७.

"ये मिठाइयाँ डोमड़ों के लिए नहीं बनायी गयी थीं।"[१]

आगे वह कहता है, –

"यदि ईश्वर की इच्छा होती कि प्राणिमात्र को समान सुख प्राप्त हो तो उसे सबको एक दशामें रखने से किसने रोका था ? वह ऊँच–नीच का भेद होने ही क्यों देता है ? जब उसकी आज्ञा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता, तो इतनी महान सामाजिक व्यवस्था उसकी आज्ञा के बिना क्यों कर भंग हो सकती है ? जब वह स्वयं सर्वव्यापी है तो वह अपने ही को ऐसे–ऐसे घृणोत्पादक अवस्थाओं में क्यों रखता है ? जब तुम इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं दे सकती तो उचित है कि संसार की वर्तमान रीतियों के अनुसार चलो।"[२]

पति के मुखसे ये बातें सुनकर उसका हृदय उसके प्रति घृणा से भर जाता है और उसे उसका घर कारागार जैसे लगता है, तब वह अपने मन–ही–मन कहती है, –

"मुझे विश्वास है कि जल्दी या देर ब्रह्म ज्योति यहाँ अवश्य चमकेगी और वह इस अन्धकार को नष्ट कर देगी।"[३]

निष्कर्ष :–

इसमें कहानीकारने "वृन्दा"के माध्यम से ब्राह्मण वर्ग के पाखंडी रूप का पर्दा खोलने का प्रयास किया है।

६. "भूठ" :–

इस कहानी के नायक "डॉक्टर जयपाल" के पाँच सौ रुपयोंकी चोरी हो जाती है, तो वह इसका पता लगानेके लिए गांव के चमार "बुध्दू चौधरी", जो ओझा था उसके पास जानेकी सोचते हैं। क्योंकि वह "भूठ" चलानेमें विशेषज्ञ था। उसके बारेमें वे कहते हैं, –

---

१. प्रेमचन्द, ब्रह्म का स्वाँग, पृ. ११९, सं. १९८७।
२. प्रेमचन्द, ब्रह्म का स्वाँग, पृ. ११९, सं. १९८७।
३. प्रेमचन्द, ब्रह्म का स्वाँग, पृ. ११९, सं. १९८७।

"हाँ खूब याद आया। नदी की ओर जाते हुए वह जो एक ओझा बैठता है, उसके करतब की कहानियाँ प्राय: सुननेमें आती हैं। सुनता हूँ, गए हुए धन का पता बता देता है, रोगियों को बात की बात में चंगा कर देता है, चोरी के माल का पता लगा देता है, मूठ चलाता है। मूठ की बड़ी बड़ाई सुनी है, मूठ चली और चोर के मुँह से रक्त जारी हुआ, जब तक वह माल न लौटा दे रक्त बन्द नहीं होता।"[१]

यह विचार आते ही वे उसके पास जाकर मूठ चलाने के लिए कहते हैं। घर आते हैं तो रातके समय बुढ़िया महरी "जगिया" की तबियत बिगड़ जाती है। तो डॉक्टर बुध्दू के पास फिर मूठ उतारने का अनुरोध करनेके लिए जाते हैं। तो बुध्दू की माँ मन-ही-मन कहती है, -

"पर अभी तो बुध्दू ने मूठ चलाई नहीं। उसका असर क्योंकर हुआ, समझाती थी तब न माने। खूब पैसे।"[२]

इतना कहकर वह अवसर का लाभ उठानेके हेतु मूठ उतारने के लिए पाँच सौ रुपयोंकी माँग करती है। जब बुध्दू डॉक्टरके घर आता है तो जगियाको देखकर कहता है -

"मुझे मालूम न था कि मूठ के देवता इस वख्त इतने गरम हैं। वह मेरे मनमें बैठे कह रहे हैं, तुमने हमारा शिकार छीना तो हम तुम्हें निगल जायेंगे।"[३]

वह मूठ उतारना आरम्भ कर देता है, जिसका वर्णन कहानीकारने निम्न प्रकारसे किया है, -

"कुछ बुदबुदाकर फू-फू करता जाता था। एक क्षण में उसकी सूरत डरावनी हो गयी, लपटें-सी निकलने लगीं। बार-बार अँगड़ाइयाँ लेने लगा। इसी दशामें उसने एक बेसुरा गीत गाना आरम्भ किया।"[४]

---

१. प्रेमचन्द - मूठ, पृ. १०२। सं. १९८७।
२. प्रेमचन्द - मूठ, पृ. १०९, सं. १९८७।
३. प्रेमचन्द - मूठ, पृ. ११२, सं. १९८७।
४. प्रेमचन्द - मूठ, पृ. ११२, सं. १९८७।

और थोडीही देरमें जगिया उठ बैठती है।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने पढें-लिखें डॉक्टरको भी "मूठ" जैसे अंधविश्वास पर विश्वास करते हुए चित्रित किया है।

७. "तैंतर" :-

इस कहानी का एक पात्र "पंडित दामोदरदत्त" पाठशाला में शिक्षक है। जब उसकी पत्नि को तीन पुत्रोंके पश्चात् कन्या होती है तो उसकी माँ उसे कहती है, -

"अनर्थ, महाअनर्थ! भगवान ही कुशल करें तो हो! यह पुत्री नहीं, राक्षसी है। इस अभागिनी को इसी घर में आना था। आना ही था तो कुछ दिन पहले क्यों न आयी? भगवान सातवें शत्रु के घर भी तैंतर का जन्म न दें।"[१]

तब वह अपने माँ को समझाते हुए कहता है, -

"अम्माँ, तैंतर-वैंतर कुछ नहीं, भगवान की जो इच्छा होती है, वही होता है। ईश्वर चाहेंगे तो सब कुशल ही होगा।"[२]

तब वह कहती है, - "तुम क्या जानो इन बातों को, मेरे सिर तो बीत चुकी है, प्राण नहीं में समाया हुआ है। तैंतर ही के जन्मसे तुम्हारे दादा का देहान्त हुआ। तभी से तैंतर का नाम सुनते ही मेरा कलेजा कँप उठता है।"[३]

---

१. प्रेमचन्द, तैंतर, पृ. १०९, सं. १९८०।
२. प्रेमचन्द, तैंतर, पृ. १०९ सं. १९८०।
३. प्रेमचन्द, तैंतर, पृ. १०९ सं. १९८०।

माँ की बातें सुनकर वह उसके उत्पन्न कष्ट के निवारण के लिए उपाय पूछता है, तब वह इसका कोई उपाय न होने का कहती है। उसके तीनों पुत्र उस नन्हीं सी गुड़ियाँ जैसी बहनको देखकर खुश हो जाते हैं। परंतु उनकी माँ उस बच्ची की ओर ताकती भी नहीं।

तीन-चार महीने बीत जाते हैं। एक दिन रातके समय दामोदर-दत्त को प्यास लगती है वह पानी पीनेके लिए उठता है, तो उसकी नजर अँगूठा चूस रही बच्चीपर पड़ती है उसका मुरझाया हुआ चेहरा देखकर उसे दया आती है। वह प्यारसे उसे हाथमें लेकर चूमने लगता है। दूसरे दिन प्रात:काल वह उसे गोदमें उठाकर बाहर लाता है। सौभाग्यसे उनके मकान के सामने एक बकरी नियमित चारा चरनेके लिए आती थी। उस दिन भी वह आयी थी। उसे देखकर वह अपने बेटेको उसे पकड़कर लाने के लिए कहता है। दोनों बेटे बकरीको पकड़कर लाते हैं और दामोदरदत्त नन्हीं-सी लड़कीका मुँह बकरीके थन में लगा देते हैं, तो लड़की चुबलाने लगती है। दूध की धार उसके मुँहमें जाने लगती है। उस दिनसे लड़के दिनमें दो-दो, तीन-तीन बार बकरीको पकड़कर लडकीको दूध पिलाने लगते हैं। इसप्रकार एक महीना गुजर जाता है और लड़की हष्ट-पुष्ट हो जाती है। इसी तरह और एक महीना गुजर जाता है तब दामोदरदत्त अपनी माँ से कहता है -

"यह सब ढकोसला है, तेंतर लड़कीयाँ क्या दुनियामें होती ही नहीं, तो सबके माँ-बाप मर ही जाते हैं ?"[1]

उसकी बातें सुनकर उसकी माँ अपनी शंका को यथार्थ सिध्द करने की एक तरकीब सोचती है। एक दिन वह स्कूलसे लौटता है, तो उसे वह खाटपर अचेत अवस्थामें पड़ी हुई दिखाई देती है। तब वह डाक्टर बुलानेके लिए जाना चाहता है तो वह कहती है -

"बेटा, सब भगवान् करते हैं, यह बेचारी क्या जाने! देखो, मैं मर जाऊं तो उसे कष्ट मत देना। अच्छा हुआ, मेरे सिर आयी। किसी के सिर तो जानी ही है मेरे ही सिर सही।"[2]

---

१. प्रेमचन्द, तेंतर, पृ. ११५, सं. १९८०।
२ प्रेचन्द, तेंतर पृ. ११५. सं. १९८० ।

वह अपने पास बैठकर उसे भागवत पढ़नेके लिए कहता है। माँ न बचेगी यह देखकर वह भागवत पढ़ने लगता है। रातको जब बहू सास के लिए शाबुदानी की खीर बनवाना चाहती है तो उसे सास अच्छासा भोजन तैयार करनेके लिए बताती है। दूसरेही दिन घरकी महरी सारे मुहल्लेभर में बीमारी की खबर सुनाती है, तो मुहल्लेभर की सारी महिलाएँ लड़कीको दोष देने लगती हैं। उनमेंसे एक पड़ोसिन तो कहती है, -

"यह तो कहो, बड़ी कुशल हुई कि बुढ़िया के सिर गई, नहीं तो तैंतर माँ-बाप दो में से एक को लेकर तभी शान्त होती है। दैव न करे कि किसी के घर तैंतर का जन्म हो।" [१]

तो दूसरी कहती है - "मेरा तो तैंतर का नाम सुनतेही रोएँ खड़े हो जाते हैं। भगवान बाँझ रखे, पर तैंतर न दें।" [२]

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने ग्रामीण समाजमें तीन पुत्रोंके पश्चात होनेवाली कन्या को "तैंतर" या अभागिनी" समझा जाता है और उसके कारण माता-पिता या घरके कोई अन्य लोगोंकी मृत्यु निश्चित मानी जाती है इस रूढ़ अंधविश्वास को चित्रित करनेका प्रयास किया है ।

८ "मनुष्य का परमधर्म" :-

"पंडित मोटेराम शास्त्री" लड्डू और रसगुल्ले के भक्त थे, जो इस कहानीके नायक हैं। उन्हें सालमें केवल एक बारही ये पदार्थ खानेके लिए मिलते थे। उस साल होली के दिन भी उन्हें खानेके लिए कुछ नहीं मिलता तो वे अपने

---

१. प्रेमचन्द, तैंतर, पृ. ११७, सं. १९८० ।
२ प्रेमचन्द, तैंतर, पृ. ११७, सं. १९८० ।

भक्तों तथा गांववालों को कोसने लगते हैं। इसी समय उनका परममित्र "पं. चिन्तामणि" उनके घर आता है। तो ये महाशय उसकी हालात पूछते हैं तब वह भी नाराज दिखाई देता है। तो पं. मोटेराम उसे कहते हैं, –

"भाई, हम तो साधू हो जायेंगे। जब इस जीवनमें कोई सुख ही नहीं रहा, तो जीकर क्या करेंगे ? अब बताओ कि आज के दिन उत्तम पदार्थ न मिले, तो कोई क्योंकर जिए।"[१]

तो मोटेराम कुछ सोचकर पं. चिन्तामणि को साथ लेकर गंगातट पर जाते हैं। वहां स्नान करके दोनों एक पंडे की चौकी पर भजन गाने लगते हैं। यह देखकर सैंकड़ो लोग वहाँ इकट्ठा हो जाते हैं तो मोटेराम अपना भाषण शुरू करते हुए कहते हैं –

"सज्जनो, आपको ज्ञात है कि जब ब्रह्मा ने इस असार संसार की रचना की, तो ब्राह्मणों को अपने मुखसे निकाला। किसी को इस विषयमें शंका तो नहीं है ?" [२]

तो लोग इस बातको सत्य मान लेते हैं। इसके आगे भी वे कहते हैं, –

"तो ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से निकले, यह निश्चय है। इसलिए मुख मानव शरीर का श्रेष्ठतम भाग है। अत एवं मुख को सुख पहुँचाना, प्रत्येक प्राणी मात्र का कर्तव्य है।"[३]

और आगे वह मुख को सुख देनेका श्रेष्ठतम और सबसे उपयोगी ढंग –

"मुखको उत्तम पदार्थों का भोजन करवाना, अच्छी-अच्छी वस्तु खिलाना।"[४] बताते हैं । तब एक आदमी इस प्रश्नके बारेमें शंका प्रगट करता है तो वे उसे वेद-मन्त्रों का प्रमाण देकर उसकी शंका का समाधान करते हैं।

---

१. प्रेमचन्द – मनुष्य का परमधर्म, पृ. २१२, सं. १९८०।
२. प्रेमचन्द – मनुष्य का परमधर्म, पृ. २१३, सं. १९८०।
३. प्रेमचन्द – मनुष्य का परमधर्म पृ. २१३, सं. १९८०।
४. प्रेमचन्द – मनुष्य का परमधर्म पृ. २१४, सं. १९८०।

आगे वह मुखको सुख देनेवाला "मीठा पदार्थ" सब पदार्थोंमें श्रेष्ठ कैसे इसके बारेमें लोगोंसे कहते हैं, -

"यदि आपके थाल में जौनपुर की अमृतियाँ, आगरे की मोतीचूर, मथुरा के पेड़े, बनारस की कलाकन्द, लखनऊ के रसगुल्ले, अयोध्या के गुलाबजामुन और दिल्ली का हलुआ-सोहन हो, तो वह ईश्वर-भोग के योग्य है। देवतागण उस पर मुग्ध हो जायँगे और जो साहसी, पराक्रमी जीव ऐसे स्वादिष्ट थाल ब्राह्मणों को जिमाएगा, उसे सदेह स्वर्गधाम प्राप्त होगा। यदि आपको श्रध्दा है, तो हम आपसे अनुरोध करेंगे कि अपना धर्म अवश्य पालन कीजिए, नहीं तो मनुष्य बनने का नाम न लीजिए।" [१]

पं. मोटेराम का भाषण समाप्त होनेपर पं. चिन्तामणि अपने भाषण में कहते हैं, -

"मेरे विचार में यदि आपके थालमें केवल जौनपुर की अमृतियाँ हों, तो वह पँचमेल मिठाइयों से कहीं सुखवर्धक, कहीं स्वादपूर्ण और कहीं कल्याणकारी होगा।" [२]

दोस्त के विचार सुनकर मोटेराम उसे कहते हैं, - "तुम्हारी यह कल्पना मिथ्या है। आगरे के मोतीचूर और दिल्ली के हलुवा-सोहन के सामने जौनपुर की अमृतियों की तो कोई गणना ही नहीं है।" [३]

अंतमे दोनों मित्र आपसमें लड़ने लगते है तो उपस्थित लोग दोनों को अलग-अलग कर देते हैं।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने पं. मोटेराम और पं. चिन्तामणि को ग्रामीण लोगोंके शोषणके नियामकके रूपमें चित्रित करते हुए वे भोले-भाले लोगोंको धर्म के नामपर किसतरह फँसाते थे इसका सही चित्रण करनेका प्रयास किया है।

---

१. प्रेमचन्द - मनुष्य का परमधर्म, पृ. २१४, सं. १९८० ।
२. प्रेमचन्द - मनुष्य का परमधर्म, पृ. २१६, सं. १९८० ।
३. प्रेमचन्द - मनुष्य का परमधर्म, पृ. २१६, सं. १९८० ।

९. "बासी भातमें खुदा का साझा" :-

प्रस्तुत कहानी की नायिका "गौरी" का पति "दिनानाथ" एक कार्यालयमें नौकरी करता है। एक दिन वह दफ्तरसे लौटने लगता है, तो उसके मालिक उसकी वफादारी देखकर उसे बुला लेते हैं और उससे कार्यालयके लेजर का एक पन्ना बदलने के लिए कहते हैं। दिनानाथ लेजर का पन्ना बदलनेके लिए तैयार नहीं होता। तो मालिक उसे समझाते हैं और उनके समझाने पर दिनानाथ लेजरका पन्ना बदल देता है परंतु तब से उसे इस बातका सदैव डर लगा रहता है और वह मन-ही-मन सोचता है, -

"इस अपराध का कोई भयंकर दण्ड अवश्य मिलेगा। किसी प्रायश्चित, किसी अनुष्ठान से उसे रोकना असम्भव है। अभी न मिले, दस-पांच साल न मिले, पर जितनी ही देरमें मिलेगा, उतना ही भयंकर होगा, मूलधन ब्याज के साथ बढ़ता जाएगा।" १

उसे हरदम पछतावा होता रहता है। एक दिन उसके बच्चे को ज्वर आ जाता है, तो उसे लगता है दंड का विधान आ पहुँचा। थोड़े दिनोंके बाद बच्चा ठीक हो जाता है, परंतु वह खुद बीमार पड़ता है तो उसे लगता है, ये मेरे कर्म का फल है। अब मैं इसमेंसे नहीं बच सकता। तब उसकी पत्नी भगवानसे मन्नत माँगते हुए कहती है, - "यह अच्छे हो जायेंगे, तो पचास ब्राम्हणोंको भोजन कराऊँगी।" २

पति ठीक होनेपर वह उसे मनौति पूरी करनेके लिए पचास ब्राम्हणोंके साथ पचास कंगाल लोग और कुछ दोस्त मिलाकर कुल दो सौ आदमियोंको नेवता देनेके लिए कहती है, क्योंकि उसका पूरा विश्वास था कि उसका पति ब्रम्हभोजकी मनौती करनेसे ही ठीक हो गया है। परंतु पतिको लगता था कि जिन्दगी बाकी थी इसलिए ठीक हो गया और वह उसे कहता है, -

"तुम समझती हो, मैं भगवान की दया से अच्छा हुआ ? अच्छा इसलिए हुआ कि जिन्दगी बाकी थी।" ३ आगे वह कहता है, -

---

१. प्रेमचन्द - बासी भातमें खुदा का साझा, पृ. १६८, सं. १९८७।
२. प्रेमचन्द - बासी भातमें खुदा का साझा, पृ. १७०, सं. १९८७।
३. प्रेमचन्द - बासी भातमें खुदा का साझा, पृ. १७०, सं. १९७८।

"बासी भातमें खुदा के साझे की जरुरत नहीं। अगर तुमने ओज-भोज पर जोर दिया, तो मैं जहर खा लूँगा।"[१]

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने "गौरी" के माध्यमसे ग्रामीण स्त्रियोंमें व्याप्त "ब्रम्हभोज" की मनौति का यथार्थ चित्रण किया है। तो दूसरी तरफ उसके पतिको ब्रम्हभोज जैसी मनौतिमें विश्वास न रखते हुए चित्रित किया है।

१०. "मुक्तिधन" :-

प्रस्तुत कहानी का नायक "रहमान" अपनी माता को हज करने ले जाना चाहता है। परंतु उसकी आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय थी। घरमें एक समय पेटभर खाना भी नहीं मिलता फिर भी धार्मिक प्रथाओं के अनुसार माँ को हज की यात्रा करने के हेतू अपनी गऊ "महाजन दाउदयाल" को बेच देता है और माँ के साथ हज चला जाता है।

हजसे वापस आ जानेके कुछ दिनों बाद उसकी माँ का देहांत हो जाता है, तो वह पड़ोसियोंसे रुपये उधार लेकर अंत्यसंस्कार करता है जिसका चित्रण कहानीकारने निम्नरुपमें किया है, -

"इस वक्त पड़ोसियों से कुछ उधार लेकर दफन-कफन का प्रबन्ध किया, किन्तु मृत आत्मा की शान्ति और परितोषके लिए जकात और फातिहे की जरुरत थी, कब्र बनवानी जरुरी थी, बिरादरी का खाना, गरीबों को खैरात, कुरान की तिलावत और ऐसे कितने ही संस्कार करने परमावश्यक थे।"[२]

---

१. प्रेमचन्द - बासी भातमें खुदा का साझा, पृ. १७१, सं. १९७८।
२. प्रेमचन्द - मुक्तिधन - पृ. १७८, सं. १९८०।

इन धार्मिक कृत्योंको पूरा करनेके लिए वह दो सौ रुपये महाजन दाऊदयाल से उधार लाता है और अपनी जातिप्रथाके अनुसार सारे धार्मिक कृत्योंको पूरा करता है।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने "रहमान" को महाजनसे पैसे उधार लेकर "मृतक भोज" जैसे धार्मिक पाखण्ड को पूरा करते हुए चित्रित किया है।

११. "मृतक भोज" :-

प्रस्तुत कहानी की नायिका "सुशिला" के पति की मृत्यु हो जाती है, तो वह घरमें बचे पैसे से पति का अंतिम संस्कार करती है। पाँचवे दिन बिरादरीके सरपंच "सेठ धनीराम" उसके घर आकर मृतक भोजका प्रस्ताव रखते हैं। तब सुशीला घरमें पैसे न होने की बात करती है, तो दूसरे सेठ कुबेरदास उसे कहते हैं, -

"भोज तो करना ही पड़ेगा। हाँ, अपनी सामर्थ्य देखकर काम करना चाहिए। मै कर्ज लेने को न कहूँगा। हाँ, घरमें जितने रुपयोंका प्रबन्ध हो सके, उसमें हमें कोई कसर न छोड़नी चाहिए। मृत-जीव के साथ भी तो तुम्हारा कुछ कर्तव्य है। अब तो वह फिर कभी न आयेगा, उससे सदैव के लिए नाता टूट रहा है। इसलिए सब कुछ हैसियत के मुताबिक होना चाहिए। ब्राम्हणों को तो वही पड़ेगा कि मर्यादा का निर्वाह हो।" [१]

और वे उसे मकान बेचनेकी सलाह देते हैं। यह सुनकर उसका भाई संतलाल कहता है, -

"किस लिए मकान बेच दिया जाय ? बिरादरीके भोजके लिए ? बिरादरी

---

१. प्रेमचन्द - मृतक भोज, पृ. १५७, सं. १९८० ।

तो खा-पीकर राह लेगी, इन अनाथोंकी रक्षा कैसे होगी ? इनके भविष्यके लिए भी तो कुछ सोचना चाहिए।"[१]

तो धनीराम उसे कहता है, - "केवल भविष्य की चिन्ता करनेसे काम नहीं चलता। मृतक का पीछा भी किस तरह सुधारना ही पड़ता है । आपका क्या बिगड़ेगा। हँसी तो हमारी होगी। संसार में मर्यादा से प्रिय कोई वस्तु नहीं। मर्यादा के लिए प्राण तक दे देते हैं । जब मर्यादा ही न रही, तो क्या रहा।"[२]

अंतमें सुशीला का मकान तीन हजारमें कुबेरदास खरीद लेता है और उसके घर ब्रह्मभोज का आयोजन होता है। परंतु उसके अनाथ बच्चोंके लिए क्या क्या इसके बारेमें कोई नहीं सोचता।

एक महीनेके बाद उसे मकान भी छोड़ना पड़ता है। तब वह अपने बच्चोंको लेकर किरायेके मकानमें रहने जाती है। तीन महीनेके बाद जब मकान मालिक किराया माँगने आता है तो उसके पास पैसे न होनेके कारण वह किराया नहीं दे पाती। यह देखकर मकान मालिक झाबरमल उसे मकान खाली करनेके लिए कहता है । इतनेमें वहाँ सुशिला की कन्या "रेवती"आ जाती है। उसे देखकर झाबरमल उसकी सगाईके बारेमें पूछता है । उसकी सगाई कहीं ठीक नहीं होती है यह देखकर वह खुद उसके साथ शादी करनेके लिए तैयार होता है । परंतु सुशिला चालीस सालके दोहाजूसे रेवती की शादी करनेके लिए तैयार नहीं होती । आगे चलकर उसका बेटा बीमार पड़ता है, परंतु उसे देखने बिरादरी का कोई व्यक्ति नहीं आता। सुशीला को भी ज्वर आ जाता है और उसीमें उसको मृत्यु हो जाती है।

कुछ दिनों बाद सरपंच रेवती का विवाह झाबरमल से तय कर देते हैं तो रेवती उन्हें कहती है, - "बिरादरी ने तब हम लोगों की बात न पूछी, जब हम रोटियों के मुहताज थे। मेरी माता मर गयी; कोई झाँकने तक न गया। मेरा भाई

---

१. प्रेमचन्द - मृतक भोज, पृ. १५८, सं. १९८० ।
२. प्रेमचन्द - मृतक भोज, पृ. १५८, सं. १९८० ।

बीमार हुआ, किसीने खबर तक न ली। ऐसी बिरादरी की मुझे परवाह नहीं है।"[1]

उसका यह उत्तर सुनकर बिरादरी के लोग जबरदस्ती उसकी शादी झाबरमलसे करना चाहते हैं तो वह गंगामें समा जाती है।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने गांवके पंचोद्वारा विधवा सुशीला से मृतक भोजके बदलेमें घर, गहने छिन लेते हुए धमकि ठेकेदारोंका पाखंडी रूप चित्रित किया है।

ग्रामीण समाजमें व्याप्त तंत्र-मंत्र, झाँड-फूँक दुआ-तावीज, पूजा-पाठ आदि का चित्रण

भारतीय ग्रामों में रहनेवाले अधिकांश लोग अज्ञानी होनेके कारण अंधविश्वासों पर अधिक विश्वास करते हैं। जिसका फायदा तंत्र-मंत्र, जादू-टोना आदि में निपुण लोग उठाते रहते हैं । यहां इन लोगों को अधिक महत्व होता है। लोग उनपर पूरा विश्वास करते रहते हैं ।

यदि गांवमें कोई व्यक्ति बीमार हो जाता है तो उसे डाक्टरके पास ले जानेके बजाय तंत्र-मंत्र जाननेवाले किसी भगतके पास ले जाते हैं। इसी तरह यदि किसीको सर्पदंश होता है तो अधिकतर "मंत्रविद्या" का ही प्रयोग करते हैं । यहां की औरतें अपने बच्चों को दूसरों की बुरी नजर से बचानेके लिए टोना-टोटका, दुआ-तावीज, जन्तर-मन्तर आदि उपायोंको अपनाती रहती है।

---

१. प्रेमचन्द - मृतक भोज, पृ. १५९, सं. १९८० ।

देवी-देवताओं पीर-पैगम्बरों की पूजा ये ग्रामीण लोग अधिकांशतः करते थे। स्थानीय देवता उनके ईश्वरके प्रतीक रूपमें होते थे। यह लोग ईश्वरीय कृपाके लिए देवी-देवताओं की प्रार्थना करते और मनौतियाँ करते थे जब उनकी इच्छापूर्ती या मनौतियाँ पूरी होती है तो वह विशिष्ट देवतासे मनौतियों की पूर्ति काफी तल्लीनतासे करते हैं। इन सभी बातोंका चित्रण हमें कहानीकार प्रेमचन्दके निम्नलिखित कहानियोंमें मिलता है।

१. "माता का हृदय" :-

इस कहानी के पात्र मि. बागची और उनकी पत्नी को कई लड़के होते हैं परंतु उनमें से केवल एकही बच जाता है। उनके बच्चे नौ हृष्ट-पुष्ट पैदा होते थे परंतु उन्हें कोई न कोई रोग लग जाता था और बच्चे दो-चार महीने के बाद ही गुजर जाते थे। इसीकारण पति-पत्नि दोनों शिक्षित होनेपर भी जो एक बच्चा बचा था उसके लिए तंत्र-मंत्र, जादू-टोना, दुआ-ताबीज आदि अलग-अलग उपायोंको अपनाते रहते थे। जिसका चित्रण कहानीकारने निम्नलिखित प्रकारसे किया है, -

"माँ-बाप दोनों इस शिशु पर प्राण देते थे। उसे जरा जुकाम भी हो, तो दोनों विकल हो जाते। स्त्री-पुरुष दोनों शिक्षित थे, पर बच्चे की रक्षा के लिए टोना-टोटका, दुआ-ताबीज, जन्तर-मन्तर, एक से भी उन्हें इनकार न था।" १

अत: वे अपना बच्चा जिंदा रहनेके लिए सभी उपायोंको अपनाते रहे फिर भी उनका बच्चा कुछ दिनोंके बाद केवल सर्दी लग जानेके कारण गुजर जाता है।

---

१. प्रेमचन्द - माता का हृदय, पृ. ९९, सं. १९८० ।

निष्कर्ष :-

इस कहानीके पात्र मि. वागधी और उनकी पत्नी शिक्षित होते हुए भी तंत्र-मंत्र, जादू-टोना, दुआ-तावीज आदि निरर्थक उपायोंको बच्चा जिंदा रहे इसलिए अपनाते थे, जिसका यथार्थ चित्रण कहानीकारने किया है।

२ "आगा-पीछा" :-

इस कहानी का नायक "भगत राम" जातीसे चमार है और नायिका "श्रध्दा" वेश्या की पुत्री है। दोनों का विवाह तय होता है। विवाह के चार दिन पहले भगतराम को ज्वर आ जाता है और वह अचेतन अवस्थामें असंदिग्ध बातें करने लगता है। यह देखकर मंत्र-तंत्र में निपुण उसका पिता लौंग और राख लेकर मंत्र पढ़ने लगता है। भगतराम का सारा शरीर ठंड़ा पड़ता और सिर तवे की तरह तपता रहा देखकर उसकी माँ अपने पति को डाक्टर बुलानेके लिए कहती है। परंतु पति का डाक्टर पर विश्वास न होनेके कारण वह उसे बुलाने से इनकार करता है। वह समझता है कि, बिरादरी के बाहर ब्याह तय करनेसे भगतराम इसतरह बीमार पड़ गया है। अत: वह मंत्रोंका प्रयोग करते हुए कहता है, -

"डाक्टर आकर क्या करेगा। वही पीपलवाले बाबा तो है। दवा-दारु करना उनसे और रार बढ़ाना है। रात जाने दो सवेरा होते ही एक बकरा और एक बोतल दारु उनकी भेंट की जायगी। धरा और कुछ करने की जरूरत नहीं। डाक्टर बीमारी की दवा करता है कि हवा-बयार की ? बीमारी उन्हें कोई नहीं है, कुल के बाहर ब्याह करने ही से देवता लोग रुठ गये हैं।"[१]

और दूसरे दिन एक बकरा बली देनेके लिए लेकर स्त्रियाँ समवेत गाते-

---

१. प्रेमचन्द - आगा-पीछा, पृ. १२८, सं. १९८० ।

बजाते देवी के चौतरे की ओर जाता है। जब लौटकर आता है तो भगतराम मृत्यु के समीप जाता हुआ उसे दिखाई देता है। फिर भी वह कोई डाक्टरी उपाय नहीं करता। अंतमें भगतराम डाक्टरी उपायोंके अभावमें मर जाता है।

निष्कर्ष :-

इस कहानीका नायक भगतराम जब बीमार हो जाता है तब उसके पिता डाक्टरोंको बुलानेके बजाय तंत्र-मंत्र का प्रयोग करते हैं, बकरेको बली देते है, लेकिन अंधविश्वासके कारण अंतमें डाक्टरी सहायता न मिलनेके कारण भगतराम की मृत्यु हो जाती है: जिसका चित्रण कहानीकारने किया है।

३. "मंत्र" :-

इस कहानी के एक पात्र "डाक्टर चढ्ढा" के बेटे को एक काला साँप डस लेता है। उसके उपर काफी इलाज होते हैं, परंतु कोई फायदा नहीं होता उसकी आँखे झपकने लगती है और आधे घण्टेके अन्दर ही अन्दर मौत के सारे लक्षण दिखाई देने लगते हैं।

शहरसे कई मिल की दूरीपर अपनी झोपड़ीमें सान बेचकर एक "बूढा भगत" अपना उदरनिर्वाह कर रहा था। रात को उसके दरवाजेपर एक आदमी आकर चढ्ढा के लड़केको साँप ने डस लेने की बात बताते हुए उसपर इलाज करने जानेके लिए कहता है। तो भगत डाक्टर के बेटे को देखनेके लिए उनके घर पहुँच जाता है। डाक्टरके घर लाश उठानेके लिए लोग सुबह होनेका इंतजार कर रहे थे। इतनेमें बूढा भगत दरवाजेपर जाकर आवाज देता है, तो डाक्टर कोई मरीज आया होगा समझकर लड़केके मृत्यु के कारण एक महीनेतक किसी मरीज को न देखेंगे कहते हैं। भगत उन्हें लड़का कहाँ है पूछता है, तो डाक्टर चढ्ढा उसे कहते हैं, " -

"चलो, देख लों, मगर तीन-चार घंटे हो गए। जो कुछ होना था, हो चुका। बहु-तेरे झाँड़ने-फूँकनेवाले देख-देखकर चले गए।" १

तब बूढ़ा भगत डाक्टर के बेटेको देखकर कहता है, -

"अभी कुछ नहीं बिगड़ा है बाबूजी। वह नारायण चाहेंगे, तो आध घंटेमें भैया उठ बैठेंगे। आप नाहक दिल छोटा कर रहे हैं। जरा कहारों से कहिए पानी तो भरें।" २

कहार पानी भर-भरकर कैलाश को नहलाना शुरू करते हैं और बूढ़ा भगत खड़ा मंत्र पढ़ने लगता है। एक मंत्र समाप्त होने के बाद एक जड़ी वह कैलाश के सूँघनेके लिए देता रहता है और कैलाश की आँखे खुल जाती है। क्षणभरमें चारों ओर खबर फैल जाती है लोग भगतको देखनेके लिए चलते हैं, परंतु वह वहांसे निकलकर घर की ओर चलने लगता है।

४. "दुर्गा का मंदिर" :-

"ब्रजनाथ" इस कहानी का नायक हाइकोर्ट में अनुवादक है। एक दिन रास्तेमें उसे आठ गिन्नियोंकी एक थैली मिलती है, तो वह उसे लेकर घर आता है। इतनेमें उसका दोस्त "मुंशी गोरेलाल" उसके पास तीस रुपये उधार माँगनेके लिए आता है। ब्रजनाथ रास्तेमे मिली हुई थैलीमेंसे उसे तीस रुपये दे देता है और गोरेलाल ब्रजनाथसे पैसे दूसरे दिन लौटानेके वादेपर ले जाता है। परंतु दोस्तके पैसे लौटाये बिना ही वह तीन महीने गाँव चला जाता है।

---

१. प्रेमचन्द - मंत्र, पृ. २५५, सं. १९८७।
२. प्रेमचन्द - मंत्र, पृ. २५५, सं. १९८७।

किसी गरीबके पैसे दोस्त को दे दिये और वह समयपर न लौटाने के कारण ब्रजनाथ खुदपर ही गुस्सा करने लगता है। दूसरे दिन से अनुवाद करके वह पैसा जमा करने लगता है। परंतु अधिक परिश्रम करने की आदत न होनेके कारण वह बीमार हो जाता है, तो उसकी पत्नि भामा देवताओंकी शरण लेती है और नवरात्र का कठिण व्रत रखती है। आठ दिन पूरे हो जाते हैं। अंतिम दिन वह बच्चोंको लेकर दुर्गाकी पूजा करने मंदिर चली जाती है। मंन्दिरमें धूप और अगरबत्ती की सुगंध फैली हुई थी। चारों ओर पवित्रता का समा छाया हुआ था। भामा भी मूर्ती के सामने घुटनोंके बल बैठकर हाथ जोड़कर देवी को प्रणाम करती है। इतनेमें एक श्वेत साड़ी पहनी हुई स्त्री "तुलसी" आकर देवीके सामने सिर झुकाकर कहती है, -

"देवी, जिसने मेरा धन लिया हो, उसका सर्वनाश करो"[१]

उसके शब्द सुनकर भामा का हृदय अनिष्ट की शंका से भयभीत हो जाता है और उसके अंत:करण में, -

"पराया धन लौटा दे, नहीं तो तेरा सर्वनाश हो जायगा।"[२]

ये शब्द गूँजने लगते है। वह उस स्त्री को उसके धनके बारेमें पूछती है और अगर वह धन उसे वापस मिल गया तो वह क्या देगी इसप्रकार पूछती है। वह स्त्री उसे पैसे देनेके लिए तैयार होती है परंतु भामा उसे सिर्फ बीमार पति अच्छे हो जाय यह आशिर्वाद माँगती है।

संध्या समय भामा ब्रजनाथ के साथ "तुलसी" के घर थैली लौटाने जाती है। तुलसी का आशीर्वाद सफल हो जाता है और पूरे तीन सप्ताह के बाद ब्रजनाथ बीमारी से ठीक हो जाता है।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने "भामा" के माध्यमसे "नवरात्र व्रत" तथा दुर्गा पूजा आदिमें स्त्रियोंकी आस्था का यथार्थ चित्रण किया है।

---

१. प्रेमचन्द - लाटरी, पृ. १३९, सं. १९७९।
२. प्रेमचन्द - लाटरी, पृ. १३९, सं. १९७९।

५. "लाटरी" :-

इस कहानी का नायक "विक्रम" के घरवाले लाटरीका टिकट खरीद लेते हैं। यह देखकर विक्रम भी अपने दोस्त के साझीदारीमें किताब बेचकर दस रुपयेका टिकट खरीद लेता है। घर जाकर जब वह अपनी बहन कुंती को टिकट की बात बता देता है, तब वह उसको कहती है, -

"मैं दोनों वक्त ठाकुरजीसे अम्माँ के लिए प्रार्थना करती हूँ। अम्माँ कहती हैं, कुवाँरी लड़कियों की दुआ कभी निष्फल नहीं होती। मेरा मन तो कहता है, अम्माँ को जरूर रुपए मिलेंगे।" १

तब विक्रम को ननिहाल की बातें याद आती है,

"ननिहाल देहातमें गया था, तो सूखा पड़ा हुआ था। भादो का महिना आ गया था, मगर पानी की बूँद नहीं। तब लोगोंने चन्दा करके गाँव की सब लड़कियों की दावत की थी। और उसके तीसरे ही दिन मूसलाधार वर्षा हुई थी। अवश्य ही क्वाँरियों की दुआ में असर होता है।" २

अत: विक्रम भी कुंती को कहता है, - "हम लोगोंके लिए भी ईश्वरसे प्रार्थना किया करो। अगर हमें रुपए मिले, तो तेरे लिए अच्छे-अच्छे गहने बनवा देंगे।" ३

उधर विक्रमके पिता बड़े ठाकुर साहब और ताऊ छोटे ठाकुर साहब नास्तिक होते हुए भी लाटरीके कारण ईश्वर भक्त हो जाते हैं, जिनका चित्रण कहानीकारने निम्नरूपमें किया हैं, -

"बड़े ठाकुर साहब तो प्रात:काल गंगास्नान करने जाते और मन्दिरोंके चक्कर लगाते हुए दोपहर को सारी देहमें चन्दन लपेटे घर लौटते। छोटे ठाकुर

---

१. प्रेमचन्द - लाटरी, पृ. सं. १९ ।
२. प्रेमचन्द - लाटरी, पृ. सं. १९ ।
३. प्रेमचन्द - लाटरी, पृ. सं. १९ ।

साहब घरपर ही गरम पानी से स्नान करते और गठिया से ग्रस्त होनेपर भी राम-नाम लिखना शुरु कर देते। धूप निकल आनेपर पार्क की ओर निकल जाते और चींटियों को आटा खिलाते। शाम होते ही दोनों भाई अपने ठाकुरद्वारेमें जा बैठते और आधी राततक भागवत की कथा तन्मय होकर सुनते। विक्रमका बड़े भाई प्रकाशको साधुमहात्माओं पर अधिक विश्वास था। वह मठों और साधुओंके अखाड़ो तथा कुटियोंकी खाक छानते और माताजी को तो आधी रात तक स्नान, पूजा और व्रतके सिवा दूसरा काम ही न था।"[१]

एक दिन विक्रम का भाई प्रकाश हाथमें पट्टी बाँधे लंगडाते घर आता है। उसको पूछनेपर वह कहता है, -

"मैं जरा झक्कड़ बाबा के पास चला गया था। आप तो जानते है वह आदमियों की सूरत से भागते हैं और पत्थर लेकर मारने दौड़ते हैं। जो डरकर भागा, वह गया। जो पत्थर की चोटें खाकर भी उनके पीछे लगा रहा, वह पारस हो गया। वह यही परीक्षा लेते हैं। आज मैं वहाँ पहुँचा, तो कोई पचास आदमी जमा थे। झक्कड़ बाबा ध्यानावस्थामें बैठे हुए थे। एकाएक उन्होंने आँखे खोली और यह जन-समूह देखा, तो कई पत्थर चुनकर उनके पीछे दौड़े। फिर क्या था, भगदड़ मच गई। लोग गिरते-पड़ते भागे। एक भी न टिका अकेला मैं घंटाघर की तरह वहीं डटा रहा। बस, उन्होंने पत्थर चला ही तो दिया। पहला निशाना सिरमें लगा, उनका निशाना अचूक पड़ता है। खोपड़ी भन्ना गई, खून की धारा बह चली, लेकिन मैं हिला नहीं। फिर बाबाजी ने दूसरा पत्थर फेंका। वह हाथमें लगा। मैं गिर पड़ा और बेहोश हो गया।"[२]

"अब लॉटरी मेरे नाम आयी धरी है। यह निश्चय है। ऐसा कभी हुआ ही नहीं कि झक्कड़ बाबा की मार खाकर कोई नामुराद रह गया हो। मैं तो सबसे पहले बाबा की कुटी बनवा दूँगा।"[३]

---

१. प्रेमचन्द - लाटरी, पृ. सं. १९।
२. प्रेमचन्द - लाटरी, पृ. सं. १९।
३. प्रेमचन्द - लाटरी, पृ. सं. १९।

इस प्रकार विक्रम के घरमें लॉटरी प्राप्त करनेके हेतु पूजा-पाठ किया जाता है, कंगालोंको मिठाई बाँटी जाती है। परंतु जिस दिन लाटरी का परिणाम निकलता है उस दिन लाटरी अमेरिका के एक हब्शी के नाम निकली यह देखकर सर्वत्र निराशा छा जाती है। प्रकाश तो झक्कड़ बाबाको डण्डा लेकर मारने चलता है। ठाकुर साहब मन्दिर के पुजारी को पदच्युत कर देते हैं और छोटे ठाकुर साहब अपना सिर पीट लेते हैं। तो विक्रम की माँ कहती है -

"सभों ने बेईमानी की है। मैं कभी मानने की नहीं। हमारे देवता क्या करें ? किसी के हाथ से थोड़े ही छीन लाएँगे।"[१]

उस दिन लाटरी न लगने की निराशामें विक्रमके घर चूल्हा भी नहीं जलता।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने पूजा-पाठ, तथा मनौतियाँ, झक्कड बाबा आदि की निरर्थकताको चित्रित करनेका प्रयास किया है।

ग्रामीण समाजमें बिरादरी और पंचायत व्यवस्था का महत्व :-

भारतीय ग्रामीण समाजमें बिरादरी का अपना विशिष्ट महत्त्व था। बिना बिरादरी के ग्रामीण समाजमें व्यक्ति के जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती। व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्युतक के हरएक संस्कार बिरादरी के सहयोग तथा इच्छासे संपन्न होते थे। बिरादरी यदि किसी व्यक्ति को अपनी इच्छा के विरुध्द काम करते हुए देखती थी तो उस व्यक्ति का हुक्कापानी बन्द

---

१. प्रेमचन्द - लाटरी, पृ. सं. १९ ।

करनेका अधिकार बिरादरी को था। गाँवकी पंचायत व्यवस्था गाँव की न्यायशाला कहलाती थी। वहाँ भी बिरादरी के मुखिया होते थे। बिरादरी की मर्यादा रखना प्रत्येक व्यक्ति का धर्म था। गाँव की पूरी सामाजिक व्यवस्था पंचायतोंपर आधारित होती थी। वहां होनेवाले प्रत्येक छोटे-बडे, पारिवारिक, सामूहिक झगडे पंचों के सामने रखे जाते थे। वहाँ पूरे गाँव की सभा आयोजित होती थी। गाँवके पंच समस्त झगडोंको सुनकर अपना सर्वमान्य फैसला तय करते थे। वह फैसला गाँवका सरपंच लोगोंके सामने सुनवाता था। उनका निर्णय सही हो या गलत उन्हें स्वीकार करनाही पड़ता था। ग्रामवासीयोंको पंचों के निर्णयपर विश्वास था। प्रेमचन्दजीने इन पंचायतों तथा बिरादरी का चित्रण निम्नलिखित कहानियोंमें किया है।

१. "खून सफेद" :-

"साधो" इस कहानी का नायक है, जिसके पिता "जादोराय" और माँ "देवकी" अकाल के कारण अपना गाँव छोड़कर मजदूरी करने दूसरे गाँव निकल पड़ते हैं।

"लालगंज" पहुँचकर वे एक वृक्षके नीचे डेरा लगाते हैं। इतनेमें वहाँ कोई लोग गाड़ियों में से आते हैं और वे भी सामने आमके बगीचेमें डेरे लगाते हैं। "साधो" उन डेरोंको आश्चर्य से देखते हुए एक डेरेके नजदीक जाकर खड़ा होता है। इतनेमें एक डेरे से "पादरी मोहनदास" बाहर आते हैं और साधो को देखकर उसे गोदमें उठाते हैं। उसे अंदर ले जाकर बिस्कुट और केले खानेके लिए देते हैं। मोहनदास का पड़ाव वहां तीन दिन रहता है। चौथे दिन रातको पादरी मोहनदास के साथ साधो भी चला जाता है।

दूसरे दिन सुबह साधो को उसके माता-पिता ढूँढने लगते हैं। देवकी को लगता है, साहबने साधोपर कोई मंत्र चलाकर उसे अपने वशमें कर लिया। तीन दिन तक दोनों साधोको ढूँढते हैं, परंतु उसका कोई पता नहीं चलता।

चौदह सालके बाद एक दिन साधो अपने घर लौटता है। उसे देखकर देवकी तथा जादोराय को खुशी होती है। साधोके लौट आनेकी खबर सुनकर उसके घरके सामने गांववाले जमा हो जाते हैं। उनमेंसे एक बूढे, जगतसिंह साधो को पूछते हैं, –

"तो क्यों बेटे, तुम इतने दिनोंतक पादरियोंके साथ रहे। उन्होंने तुमको भी पादरी बना लिया होगा।" [१] तो साधो कहता है, –

"जी हाँ, यह तो उनका दस्तूर ही है।" [२] आगे वह कहता है, –

"बिरादरी मुझे जो प्रायश्चित बतलावेगी, मैं उसे करूँगा। मुझसे जो बिरादरी का अपराध हुआ है, नादानी से हुआ है, लेकिन मैं उसका दंड भोगने के लिए तैयार हूँ।" [३]

उसकी बातें सुनकर जगतसिंह फिर कहते हैं, –

"हिंदू धर्ममें ऐसा कभी नहीं हुआ है। यों तुम्हारे मां-बाप तुम्हें अपने घरमें रख ले, तुम उनके लड़के हो, मगर बिरादरी कभी इस काम में शरिक न होगी।" [४] तब साधो की माँ कहती है, –

"चाहे बिरादरी ही छूट जाय। लड़केवालों ही के लिए आदमी आड़ पकडता है। जब लड़का ही न रहा तो भला बिरादरी किस काम आवेगी?" [५]

जगतसिंह तथा गांववाले साधो को घरमें रखनेकी बातपर राजी नहीं होते यह देखकर साधो कहता है, –

"मैं अपने घरमें रहने आया हूँ। अगर यह नहीं है तो मेरे लिए इसके सिवा कोई उपाय नहीं है कि जितनी जल्दी हो सके, यहाँ से भाग जाऊँ। जिनका खून सफेद है, उनके बीच में रहना व्यर्थ है।" [६]

---

१. प्रेमचन्द – खून सफेद, पृ. १२, सं. १९८७।
२. प्रेमचन्द – खून सफेद, पृ. १२, सं. १९८७।
३. प्रेमचन्द – खून सफेद, पृ. १२, सं. १९८७।
४. प्रेमचन्द – खून सफेद, पृ. १२, सं. १९८७।
५. प्रेमचन्द – खून सफेद, पृ. १२, सं. १९८७।

और वह जहाँ से आया था वहां फिर वापस चला जाता है।

निष्कर्ष :-

कहानीका नायक "साधो" को धर्मपरिवर्तन के कारण बिरादरी के ठेकेदार धर्मके नामपर उसे बिरादरी में रखनेके लिए तैयार नहीं होते यह देखकर मजबूरन उसे पादरियोंके पास जाना पड़ता है जिसका वास्तविक चित्रण इस कहानीमें किया गया है।

२. "दंड" :-

कहानीका नायक "जगत पांडे" एक गरीब ब्राह्मण है। एक दिन जंट साहब मि. सिनहा के पास राजासाहबके विरुद्ध मुकदमा लड़ने आता है और उनके पैरोंपर गिन्नियोंकी एक थैली रख देता है। परंतु मि. सिनहा उससे और पैसोंकी माँग करते हैं तो वह पाँच गिन्नियाँ और दे देता है। उसी रात मि. सिनहा के पास राजासाहब का मुखतार पं. सत्यदेव आता है और पांडे मुकदमा न जीते इसीलिए सिनहाको गिन्नियोंकी एक गड्डी देता है, तो वे उससे और १० गिन्नियाँ लेते हैं।

जगत पांडे को पूरा विश्वास था कि, जीत उसीकी होगी। परंतु मुकदमों का फैसला पांडेके खिलाफ होता है यह देखकर पांडे मि. सिनहा का बदला लेनेके हेतू उनके घरके सामने अनशन के लिए बैठ जाता है और लोगों को अपनी रामकहानी सुनाते हुए मि. सिनहा की दिल खोलकर निंदा करता है। उसकी बाते सुनकर लोग मि. सिनहा को दोष देने लगते हैं।

इसीतरह चार दिन बीत जाते हैं। छठे दिन पांडे का मुँह बन्द हो जाता है फिर भी वह चुपचाप पड़ा रहता है। यह देखकर मि. सिनहा की पत्नी पति से कहती है, -

"बुड्ढा मर गया, तो हम कहीं के न रहेंगे। अब रुपये का मुँह मत देखो। दो-चार भी देने पड़े तो देकर उसे मनाओ। तुमको जाने शर्म आती हो, तो मैं चली जाऊँ।" १

उसकी बातें सुनकर मि. सिनहा उसी रात पांडेके पास जाकर उसकी इच्छा पूछते हैं। तो वह कहता है, -

"तुमने मुझे मिट्टी में जो मिला दिया। मेरी डिग्री हो गई होती, तो मुझे दस बीघे जमीन मिल जाती और सारे इलाकेमें नाम हो जाता। तुमने मेरे डेढ सौ नहीं लिये, मेरे पाँच हजार बिगाड़ दिए। पूरे पाँच हजार। लेकिन यह घमण्ड न रहेगा, याद रखना कहे देता हूँ, सत्यानाश हो जायेगा। इस अदालतमें तुम्हारा राज्य है, लेकिन भगवान के दरबार मे विप्रोंहीका राज्य है। विप्रोंही का धन लेकर कोई सुखी नहीं रह सकता।" २

यह कहकर वह अपना अनशन छोड़नेके लिए पाँच हजार रुपयेकी माँग करता है। मि. सिनहा उसे पाँच हजार रुपये लाकर देते हैं तो वह वहांसे उठकर घर जाने लगता है। दो कदम जाते ही गिर पड़ता है। तब मि. सिनहा उसे उठाने के लिए दौड़ते हैं, लेकिन वह ठंडा पड़ जाता है। यह देखकर वे उसके हाथसे नोटोंका पुलिन्दा लेकर घर आते हैं।

दूसरे दिन शहरमें पांडेकी मृत्युकी खबर फैल जाती है और लोग सिनहा-को गालियाँ देने लगते हैं। सिनहाके घरके सारे नौकर भी उनका काम छोड़कर चले जाते हैं। उनके रिश्तेदार उनके घर आना छोड़ देते है।

एक सालके अन्दर ही सिनहा की पुत्री "त्रिवेणी" विवाह योग्य बन जाती है। परंतु सिनहाकी रिश्वत खोरी के कारण उसे कोई भी देखनेके लिए नहीं आता। यह देखकर मि. सिनहा अपनी गलती मानकर प्रायश्चित्त करनेके लिए तैयार होते हुए कहते हैं, -

---

१. प्रेमचन्द - दंड, पृ. १३६, १३७, सं. १९८० ।
२. प्रेमचन्द - दंड, पृ. १४२, १४३, सं. १९८० ।

"मैने एक ब्राह्मण से रिश्वत ली। इससे मुझे इन्कार नहीं। लेकिन कौन रिश्वत नहीं लेता। अपने गौं पर कोई नहीं चूकता। ब्राह्मण नहीं, खुद ईश्वर ही क्यों नहीं, रिश्वत खानेवाले उन्हें भी चूस लेंगे। रिश्वत देनेवाला अगर निराश होकर अपने प्राण दे देता है, तो मेरा क्या अपराध ? अगर कोई मेरे फैसले से नाराज होकर जहर खा ले, तो मैं क्या कर सकता हूँ। इसपर भी मैं प्रायश्चित करने को तैयार हूँ। बिरादरी जो दण्ड दे, उसे स्वीकार करने को तैयार हूँ। सबसे कह चुका हूँ, मुझसे जो प्रायश्चित चाहो, करा लो, पर कोई नहीं सुनता।"[१]

तो उनकी पत्नी उन्हें पंचायत करने के लिए कहती है। तो सिनहा कहते हैं कि पंचायत में भी बिरादरीके ही लोग होंगे। तब उनकी पत्नी उन्हें कहती है, -

"बिरादरी को बुरा मत कहो। बिरादरी का डर न हो, तो आदमी न जाने क्या-क्या उत्पात करें।" [२]

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने गरीब ब्राह्मणसे रिश्वत लेकर मुकद्मे का फैसला राजासाहब की तरफ देनेवाले सिनहाको बिरादरी के द्वारा किसतरह बहिष्कृत किया गया इसका यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।

३. "पंच-परमेश्वर" :-

इस कहानीके महत्वपूर्ण पात्र "जुम्मनशेख" और "अलगू चौधरी," जो एक दूसरेके घनिष्ट मित्र हैं। जुम्मन की एक बूढ़ी खाला थी, जिसके पास थोडी-सी मिलकियत थी। उसे कोई रिश्तेदार नहीं था। जुम्मन ने खाला से

१. प्रेमचन्द - दंड, पृ. १४२,१४३, सं. १९८० ।
२. प्रेमचन्द - दंड, पृ. १४३, सं. १९८० ।

लम्बे-चौड़े वादे करके वह मिलकियत अपने नाम करवा ली थी। जबतक दान-पत्र की रजिस्ट्री न हुई, तबतक खाला का जुम्मनने खूब आदर-सत्कार किया। परंतु रजिस्ट्री के बाद जुम्मन की पत्नी खाला को नित्य कड़वी बातें सुनाने लगी।

कुछ दिनोंतक खालाने ये बरदाश्त किया। परंतु जब उसे सहा नहीं गया तब उसने जुम्मनसे शिकायत करते हुए अलग पकाकर खाने की बात कहीं। परंतु जुम्मन उसे अलग रहने देनेके लिए राजी नहीं देता यह देखकर खाला उसके ऊपर पंचायत करने की धमकी देकर कई दिनोंतक बूढ़ी खाला गांवमें दौड़कर सभी के पास अपना रोना, रोती रहती है। एक दिन वह अलगू के पास जाकर उसे भी पंचायत में शामिल होनेके लिए कहती है। तब अलगू उसे कहता है, -

"यों आने को आ जाऊँगा; मगर पंचायतमें मुँह न खोलूँगा।"[१]

यह बताते हुए वह आगे कहता है, - "जुम्मन मेरा पुराना मित्र है। उससे बिगाड़ नहीं कर सकता।"[२] तो बूढ़ी खाला उसे कहती है, -

"बेटा, क्या बिगाड़ के डर से ईमान की न कहोगे?"[३]

अलगू उसके सवाल का कोई उत्तर नहीं दे सकता और संध्या समय पंचायतमें जाता है। पंचों के सामने खाला अपनी बात बताते हुए कहती है, -

"बेटा, खुदा से डरो। पंच न किसी के दोस्त होते हैं, न किसी के दुश्मन। कैसी बात कहते हो। और तुम्हारा किसीपर विश्वास न हो, तो जाने दो; अलगू चौधरी को तो मानते हो? लो मैं उन्हींको सरपंच बदती हूँ।"[४]

तब अलगू उसे जुम्मनका घनिष्ट मित्र होने की बात कहता है। यह सुनकर खाला कहती है -

---

१. प्रेमचन्द - पंच-परमेश्वर - पृ. १५५, सं. १९७९।
२. प्रेमचन्द - पंच-परमेश्वर - पृ. १५५, सं. १९७९।
३. प्रेमचन्द - पंच-परमेश्वर - पृ. १५५, सं. १९७९।
४. प्रेमचन्द - पंच -परमेश्वर - पृ. १५६, सं. १९७९।

"बेटा, दोस्ती के लिए कोई अपना ईमान नहीं बेचता। पंच के दिलमें खुदा बसता है। पंचों के मुँह से जो बात निकलती है, वह खुदा की तरफ से निकलती है।"[१]

अलगू पंच होते देखकर जुम्मन खुश हो गया क्योंकि अब बाजी उसकी होगी इसपर उसका पूरा विश्वास था। परंतु जब पंचों का फैसला जुम्मन सुनाता है तो वह सन्नाटेमें आ जाता है। उसका फैसला सुनकर बाकी पंच उसकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं, –

"इसका नाम पंचायत है। दूध का दूध और पानी का पानी कर दिया। दोस्ती दोस्ती की जगह है, किन्तु धर्म का पालन करना मुख्य है। ऐसे ही सत्यवादियों के बलपर पृथ्वी ठहरी है, नहीं तो वह कब की रसातल को चली जाती।"[२]

अलगू के इस फैसलेने जुम्मनके साथ होनेवाली उसकी दोस्ती की जड़ हिला दी और जुम्मन उससे बदला लेनेकी अवसर की प्रतिक्षा करने लगा। कुछ ही दिनोंमें उसे अवसर मिल जाता है। एक दिन अलगू बैल जोड़ी खरीद लेता है। परंतु दुर्भाग्य से कुछही दिनोंमें उसका एक बैल मर जाता है। तब वह दूसरा उसी गांवके समझू साहूको बेच देता है। वह एक महीनेमें किमत चुकानेका वादा करके बैल तो ले जाता है। लेकिन उसे सूखा-सूखा डालकर उससे बहुत काम करवा लेता है, जिसके कारण एक महीनेके अंदरही बैल इतना दुबला हो जाता है कि, उससे बोझ उठाया नहीं जाता और एक दिन वह रास्तेमेंही गिरकर मर जाता है।

इस घटनाको कई महीने बीत जाते है और अलगू अपने बैल की कीमत साहुके पास माँगने चला जाता है। तो साहु उलटे उससेही लड़ने लगता है। यह देखकर लोग इकट्ठा हो जाते हैं और पंचायत बिठानेके लिए कहते हैं।

---

१. प्रेमचन्द – प्रायश्चित्त पृ. १५७, सं. १९७९।
२. प्रेमचन्द – प्रायश्चित्त पृ. १५८, सं. १९७९।

पंचायत बैठ जाती है और समझू साहू जुम्मनको अपना पंच नियुक्त करता है। यह सुनकर अलगू, डर जाता है। परंतु जब जुम्मन सरपंच का स्थान ग्रहण करता है तो उसे अपनी जिम्मेदारी याद आती है और वह सोचता है,-

"मैं इस वक्त न्याय और धर्मके सर्वोच्च आसनपर बैठा हूँ। मेरे मुँहसे इस समय जो कुछ निकलेगा, वह देववाणी के सदृश्य है। और देववाणी में मेरे मनोविकारोंका कदापि समावेश न होना चाहिए। मुझे सत्य से जौं भी टलना उचित नहीं।" १

और अंतमें वह अलगूकी तरफसे फैसला सुनवा देता है। यह देख लोग जुम्मन की नीति की प्रशंसा करते हुए कहते हैं - "इसे कहते है न्याय। यह उन्हीं की महिमा हैं। पंच के सामने खोटे को कौन खरा कह सकता है ?" २

इसके बाद अलगू और जुम्मन की मित्रता फिर हरी हो जाती है।

निष्कर्ष :-

प्रेमचन्द कालीन ग्रामीण समाजमें मुकदमे के फैसले किसतरह दूध का दूध और पानी का पानी करते थे, जिसके कारण लोगोंको पंचायत के प्रति पूरा विश्वास होता था इसका सही चित्रण करनेका प्रयास लेखकने किया है।

४. "मुक्तिमार्ग" :-

"बुधू गड़ेरिया" इस कहानी का नायक है। जिसके दरवाजेपर "झिंगुरी" किसान की गाय की बछिया मर जाती है तो ब्राह्मण उसे कहता है, -

---

१. प्रेमचन्द - प्रायश्चित, पृ. १६३ सं. १९७९ ।
२. प्रेमचन्द - प्रायश्चित, पृ. १६४, सं. १९७९ ।

"शास्त्रों में इसे महापाप कहा है। गऊ की हत्या ब्राह्मणकी हत्या से कम नहीं।"[१]

और उसे प्रायश्चित्त करनेके लिए कहता है। बुध्दू को दंड निर्धारित करते हुए कहता है, –

"तीन मास का भिक्षा दंड दिया, फिर सात तिर्थस्थानों की यात्रा; उसपर ५०० विप्रों का भोजन और ५ गऊओं का दान।"[२]

उसका यह दण्ड सुनकर बुध्दू दण्ड कम करनेकी याचना करता है, परंतु ब्राह्मणके उपर कोई परिणाम नहीं होता। अंतमें बुध्दू निराश होकर पाँच सौ रुपयोंमें अपनी भेड़ियाँ बिक देता हैं। उसमेंसे दो सौ रुपयों में तिर्थयात्रा के लिए खर्च करता हैं और ३०० रुपयोंमें ब्रह्मभोज करवाता है। तब कहीं उसका प्रायश्चित पूरा होता है। इतना करने के बाद उसके पास कुछ भी नहीं बच जाता और उसे मजदूर बनना पड़ता है।

निष्कर्ष :-

इसमें कहानीकारने धर्मके नामपर ब्राह्मण बुध्दू गड़ेरियाको किसतरह, लूटते हैं। इसका यथार्थ चित्रण कहानीकार प्रेमचन्दजीने किया है।

---

१. प्रेमचन्द – मुक्तिमार्ग, पृ. २४९, सं. १९८० ।
२. प्रेमचन्द – मुक्तिमार्ग, पृ. २५० सं. १९८० ।